ॐ

Regd. No. L. 2077.

कार्तिक सम्वत् १९८४

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

भक्ति

भगवद्भक्ति विमुक्तानां शास्त्रा यदि तु मुक्तनाम ।
न ज्ञाने न च मोक्षः स्यात् तेषां जन्म सर्वदपि ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

सम्पादकः स्वामी कृष्णानन्द जी सरस्वती

वार्षिक चन्दा ३)

एक प्रति का ।)

निम्न लिखित महानुभावों ने भक्ति के संरक्षक बन कर भक्ति को अपनाने की कृपा की है।

१. राव साहब श्री वल्लभ प्रसाद जी रईस आनरेरी मजिस्ट्रेट गुलजारबाग, पटना १०१)

२. राव बहादुर ला० बनारसीदास जी रईस, मित्र ओना अम्बाला १०१)

३. श्रीमान् भाई नारायण सिंह जी हीरामण्डी लाहौर १०१)

४. राव बहादुर, कप्तान राव बलबीर सिंह जी ओ. बी. ई. रामपुरा ५१)

५. श्रीमान् राय भाई गनेशीलाल जी आरमी मिनिस्टर अलवर राज्य ५१)

६. राव श्रीराम रईस नांगल २५)

७. म० शोभाराम जी डूंगरवास २५)

८. चौ० धर्मसिंह जी मलिक, तहसीलदार रेवाड़ी २५)

९. राव निहालसिंह जी सूबेदार पाल्हावास २५)

१०. बा० रघुम्बरदास जी बी० ए० इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्ज़ पटना यू० पी०। २५)

११. श्रीमती रानी निहालकौर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलबीरसिंह जी ओ० बी० ई० जागीरदार रामपुरा रेवाड़ी। २५)

सहायक।

१. पं० मूलचन्द जी प्रेसीडेंट म्यूनिसिपल कमेटी पलवल। ११)

२. श्रीमती उमरावकौर धर्मपत्नी राव जगमालसिंह जी रईस नांगल ११)

३. महाशय शादीराम जी मस्तापुर, रेवाड़ी। ५)

४. बा० व्रजलाल जी सिरश्तेदार प्राईवेट सेक्रेटरी आफिस संगरूर, जींद। ५)

५. राव बलवन्तसिंह जी मु० जैनपुर तहसील रेवाड़ी। ५)

६. श्रीमती भूरज देवी धर्म पत्नी चौ० ज़ोरावरसिंह जी शिशन ब्रज अलीगढ़। ५)

७. चौ० शिवनारायणसिंह जी कोतवाल, सीकर राजपूताना ५)

ॐ

"कलौतु केवला भक्तिः" ।

वार्षिक चन्दा २)

भक्ति

एक प्रति का ।)

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली मासिक पत्रिका ।

वर्ष २ } भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, कार्तिक पूर्णिमा सं० १९८४ । { अङ्क २

॥ मंगलाचरणम् ॥

नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ १ ॥

हे दुःख के दूर करने वाले रुद्रदेव ! आप के क्रोध के निमित्त नमस्कार है, तुम्हारे बाणों के निमित्त नमस्कार है और तुम्हारी दोनों भुजाओं के निमित्त नमस्कार है ॥ १ ॥

याते रुद्र शिवा तनुरघोरा पापकाशिनी । तया नस्तन्वा शन्तमया गिरीशन्ताभिचाकशीहि ॥ २ ॥

हे कैलाश पर शयन करने वाले रुद्र ! जो तुम्हारा शान्त विषमता रहित, पुण्य फल का देने वाला शरीर है उस सुख भरे शरीर से हम को अवलोकन कीजिये ॥ २ ॥

नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे । अथो ये अस्य सत्वानोऽहन्तेभ्यो अकरन्नमः ॥ ३ ॥

नील कण्ठ, सहस्रनेत्र, सेचन में समर्थ पर्जन्य रूप रुद्र के लिये नमस्कार हो । जो रुद्र के अनुचर विशेष हैं उन के निमित्त मैं नमस्कार करता हूं ॥ ४ ॥

नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमः । नमो निषङ्गिण इषुधिमते तस्कराणां पतये नमो नमः ॥ ४ ॥

ठगों के और विश्वास घातियों के निमित्त नमस्कार है । गुप्त चोरों के पालक के निमित्त नमस्कार है । खड्गधारी बाणधारी के निमित्त नमस्कार है। चोरों के पालक के निमित्त नमस्कार है ॥ ४ ॥

नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च ॥ ५ ॥

जटाजूट धारी के निमित्त नमस्कार है, मुण्डित केश के निमित्त नमस्कार है, सहस्र लोचन रुद्र के निमित्त, बहुत धनुष धारण करने वाले के निमित्त, पर्वत पर शयन करने वाले के निमित्त, विष्णु रूप के निमित्त, मंत्र रूप के निमित्त और बाण धारी के निमित्त नमस्कार है ॥५

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥ ६ ॥

गणों के निमित्त, गणों के अधिपति आपके निमित्त, अनेक जातियों के समूह के निमित्त व्रातगणों के अधिपति आपके निमित्त, बुद्धिमानों के निमित्त, बुद्धिमानों के रक्षक आपके निमित्त विविध रूप वालों के निमित्त, और सर्व रूप आपके निमित्त नमस्कार है ॥ ६

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च

सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च ॥ ७ ॥

अल्प शरीर के लिये, वामन के लिये, प्रौढाङ्ग के लिये, अतिवृद्ध के लिये, अवस्था में अधिक के लिये, पण्डितों के साथ वर्तने वाले के लिये, मुख्य के लिये और सब में प्रथम आपके लिये नमस्कार है ॥ ७ ॥

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥ ८ ॥

ज्येष्ठ के लिये, कनिष्ठ के लिये, पूर्व में उत्पन्न होने वाले के लिये, प्रलय काल में होने वाले के लिये, मध्यम के लिये, अपगल्भ के लिये, जघन्य के लिये वृक्षादि के मूल में होने वाले आपके लिये नमस्कार है ॥ ८ ॥

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिव तरायच ॥ ९ ॥

सुख स्वरूप, संसार सुख दाता, लौकिक सुख के देने वाले, मोक्ष सुख के देने वाले, कल्याण रूप और भक्तों के कल्याण कारक के लिये नमस्कार है ॥ ९ ॥

या ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी शिवा रुतस्य भेषजी तयो न मृड जीवसे ॥ १० ॥

हे शंकर ! जो आपकी शान्त, निरन्तर कल्याण कारिणी औषधी रूप, संसार की व्याधि निवृत्त करने वाली, शरीर व्याधि की समीचीन औषधी रूप शक्ति है उस शक्ति से हमारे जीवन को सुखी करो ॥ १० ॥

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो येन्तरिक्षे येषां वात इषवः । तेभ्यो दश प्राची र्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीची र्दशोर्ध्वा। तेभ्यो नमो अस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते ये द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः ॥ ११ ॥

जो रुद्र अन्तरिक्ष में विद्यमान हैं जिनके बाण पवन है उन रुद्रों के निमित्त नमस्कार है। उनके लिये पूर्व दिशा में, दक्षिण दिशा में, पश्चिम दिशा में, उत्तर दिशा में, ऊर्ध्व दिशा में, नमस्कार हो। वे रुद्र हमारी रक्षा करें, वे हमको सुखी करें, वे जिससे हम द्वेष करते हैं और हममे जो द्वेष करते हैं उनको दाढ़ में स्थापन करते हैं ॥ ११ ॥

भक्तों के चरित्र

रैदास जी।

रैदास जी भारत के बहुत प्रसिद्ध भक्तों में हुये हैं। जिनका भक्ति भाव से सम्बन्ध है वह सब उनके नाम से परिचित हैं। यह जाति के चमार और रामानन्द जी के शिष्य हुए हैं। सेवा भक्ति भाव, व सन्तोष से पूर्ण और दिव्य ज्ञानी थे। इनका जीवन बड़ा पवित्र था।

इनके सम्बन्ध में कथा प्रसिद्ध है कि यह पहले जन्म में ब्राह्मण थे और रामानन्द जी की सेवा में रहते थे। १ दिन बाजार से एक बनिए की दुकान से सौदा लाकर भोजन बनाया। उस प्रसाद को पाकर रामानन्द जी का ध्यान नहीं लगा। कारण पूछने पर पता लगा कि जिस बनिए की दुकान से सौदा आया था वह चमारों से व्यवहार करता था। इस असावधानी से रामानन्द जी बहुत अप्रसन्न हुए और उनको शाप दिया कि "चमार हो जा" इस लिए इनका जन्म चमार के घर हुआ परन्तु भक्ति के प्रताप से इन को पूर्व जन्म का ज्ञान बना रहा।

कहते हैं जब इनका जन्म हुआ तो इन्होंने अपनी माता का दूध नहीं पीया। रामानन्द जी को आकाशवाणी हुई कि "तुम्हारे शाप से ब्राह्मण बालक ने चमारके घर जन्म लिया है, उस को जाकर दूध पिलाओ"। रामानन्द जी ने आकर इनको दूध पिलाया। जब होश सम्भाला तो भक्ति भावमें लगे। जो कुछ घर में पाते ले जाकर साधुओं को खिला देते। सांसारी आदमी इस बात को कब सहन कर सकते हैं पिता ने अलग कर दिया और घरमें द्रव्य होने पर भी एक कोड़ी तक न दी। एक छप्पर रहने को मिला यह स्त्री सहित वहां रहने लगे और जूती बना कर निर्वाह करने

लगे। अत्यन्त दरिद्री होने पर भी जो कोई साधु आता उसे बिना कुछ लिए ही जूता पहना देते। इस से आगे चल कर यह नियम बना लिया कि जो आदमी आता उसी को जूता पहना देते और कोई टूटी हुई जूतियों की मरम्मत कराता तो कर देते थे परन्तु किसी से दाम नहीं मांगते थे, अपनी इच्छा से जो कोई कुछ देता वही ले लेते। इस से दरिद्रता अपनी चरम सीमाको पहुंच गई, बहुत से धूर्त मुफ्त में ही जूती ले जाते थे। परन्तु इन का मन भगवत् चरणों में लीन था यह सबको प्रारब्ध का खेल समझते और रोटी न मिलने को भी भगवान् की दया समझते कि मालिक ने अन्तःकरण के दोषों को दूर करने के लिए तपस्या करवाने की दया की है। भगवान् के प्रेमी जनों में और हमारे जीवन में यही तो भेद है। उनका मन स्थिर और श्रद्धा व भक्ति से पूर्ण होता है। वह अपने को कर्त्ता न समझ कर, भगवान् के आश्रित रहते हैं, वह जानते हैं, कि समस्त ब्रह्माण्ड उस की दया से संचालित हो रहा है और वह जो कुछ करता है हमारी भलाई के लिए करता है इस लिए हम को उस की मौज के आधीन रह कर उस के चरणों में प्रीति रखनी चाहिए इसी में कल्याण व आनन्द है। जिनकी यह दशा होती है उन का बाह्य जीवन चाहे कैसा ही शुष्क दिखाई दे परन्तु वह आनन्द से पूर्ण व मग्न रहते हैं जिस तरह बालक अपने खेल में लगकर अपने खाने पीने को भूल जाता है और माता उसके खाने की याद दिला कर उसे भोजन कराती है इसी तरह पूर्ण शरणागत का भगवान् स्वयं ही फिकर करते हैं जैसा भगवान् ने श्रीमुख से गीता में कहा है।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषांनित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

हे अर्जुन! जो अनन्य भाव (एकचित्त) से मेरा भजन करते हैं, उनकी भोजन सामग्री और रक्षा का भार मैं स्वयं लेता हूं।

इसी नियम के अनुसार भगवान् साधुका रूप धारण कर रैदास जी के पास आये उन की सेवा पूजा स्वीकार करके उनको पारस पत्थरी देने लगे। रैदास जी बोले "बाबा मुझे इस पत्थर से क्या काम है, मैं तो राम नाम को जानता हूं, मेरा तो वही आधार है"। साधु ने उन की रांपी पारस से छुआ दी वह सोने की हो गई। यह देख कर वह बोले आज धन्धे से भी गया। साधुने बहुत समझा कर उसके रखने का आग्रह किया, रैदासजी हंसे और बोले अच्छा आप की यही इच्छा है तो इस रांपी और पत्थर को छप्पर में रख दीजिये। साधु उनको रख कर चलता बना एक वर्ष बाद वह साधु फिर आया और उन को वैसा ही कङ्गाल पाकर पूछने लगा कि पारस पत्थरीका क्या हुआ? रैदास जी बोले जहां आप रख गए थे वहां ही होगी मैं ने तो भय से उसे छूआ तक नहीं। फिर साधु ने उनको एक पूजाकी पिटारी दी, उन्होंने प्रसन्न

हो कर उस को लेलिया और बड़े प्रेम से सेवा की प्रातःकाल उठते ही क्या देखते हैं कि उस में मोहरें रक्खी हैं। यह देख कर उसे भी ताक पर रख दिया। रातको स्वप्न हुआ "यद्यपि तुमको कुछ लोभ नहीं है परन्तु हमारी दी हुई सामग्री ग्रहण करनी चाहिए"। उन्होंने भगवत् की मरजी मान स्वीकार किया। निदान भक्तों व सत्संगियों के आराम के लिए एक धर्मशाला बनवाई और भक्तों के लिए एक मन्दिर बनवाया। मन्दिर में बड़ी ही सुन्दर व मनोहर मूर्ति रक्खी और मन्दिर को ऐसे प्रेम से सजाया कि उसके दृश्य और दर्शन से लोग मोहित हो जाते थे। उस की सेवा और पूजा का कार्य ब्राह्मणों के सुपुर्द किया। अपने लिए एक साधारण मकान पृथक बनवाया।

जब रैदासजी की भक्तिका प्रभाव लोगों पर पड़ने लगा और उनका आदर मान व प्रतिष्ठा होने लगी तो नामधारी ब्राह्मणों को ईर्षा उत्पन्न हुई वह द्वेष करने लगे और काशी के राजा से जाकर बोले कि "शास्त्रकी आज्ञा व मर्यादा के विरुद्ध रैदास चमार निःशंक भगवान् की मूर्ति की पूजा करता है, इस से धर्म की हानि होती है और मर्यादा भंग होती है। राजा ने इन को बुला भेजा परन्तु इनके तप व भजन के प्रताप से राजा प्रभावित हो गया और इन से दो चार बातें पूछकर आदर सत्कार से इनको विदा कर दिया और ब्राह्मणों को समझा दिया कि यह भगवान् के सच्चे भक्त हैं इनसे द्वेष नहीं करना चाहिए। भक्ति के कारण रैदास जी का प्रभाव बढ़ता जाता था सब जाति के लोग उनके सत्संगी होते जाते थे यहां तक कि झाली रानी ने भी जो काशीमें आई हुई थी इनको अपना गुरु धारण किया। यह बात ब्राह्मणों को सहन नहीं हुई वह रानी को भी बुरा भला कहने लगे और राजा को बहकाया कि रानी पागल हो गई है वह एक चमार को गुरु मानती है। राजा ने रैदास जी को बुलाया और ब्राह्मणों को भी निमंत्रण दिया। अब इस बात के निर्णय के लिए शास्त्रार्थ करना निश्चय हुआ कि रैदास जी को भगवान की सेवा पूजा करनेका अधिकार है या नहीं?। एक तरफ बड़े विद्वान पण्डित थे और दूसरी तरफ रैदास जी अकेले थे। ब्राह्मणों ने अपने पक्ष के कितने ही मंत्र व श्लोक प्रमाण में दिए जिन से यह सिद्ध किया कि धर्म सम्बन्धी कार्य व पूजा का अधिकार केवल ब्राह्मणों को है। उधर रैदास जी ने भी शिवरी, श्वपच, महावीर, विभीषण आदि अनेक भक्त व सन्तों के उदाहरण देकर सिद्ध किया कि भगवान् की भक्ति में जाति पान्ति का कुछ भी महत्त्व नहीं है। वह सब का है और सब के लिए है, उस के निकट नीच ऊंचका कोई भेद नहीं है, मनुष्य मनुष्यों के भेद की क्या बात है वह तो जीव मात्र को समान दृष्टि से देखता है। वह केवल भक्ति से प्रसन्न होता है। भगवान भाव का भूखा है यदि भगवान ऐसा भेद करते तो गज की

रक्षा के लिए क्यों आते ?

जात पांत पूछे ना कोई।
हरि को भजे सो हरि का होई॥

राजा दोनों पक्ष की बात सुन कर कुछ निर्णय नहीं कर सका। दोनों तरफ के प्रमाण और युक्तियां उसको समान लगती थी। अन्त में यह निर्णय हुआ कि सिंहासन पर जो भगवत् मूर्ति विराजमान है वह जिस के पास प्रसन्न होकर चली आवे उस की बात सत्य और दूसरे पक्ष की झूंठ समझी जावेगी। ब्राह्मणों ने तीन पहर तक मन्त्रों से परमात्मा की प्रार्थना व अराधना की परन्तु हृदय के शामिल न होने से कुछ न हुआ। जब यह हार मान गए तो रैदास जी से कहा गया। उन्होंने प्रेम पूर्वक भगवान को नमस्कार किया और अपने बनाए हुए पदों से प्रार्थना की उन में से एक इस प्रकार है।

देवदेव आयो तुम शरणा।
सेवक जानि कृपा चित्त धरणा॥

श्रद्धा, विश्वास और प्रेम की महिमा अपार है। ऐसे भक्त जन किरोड़ों में कोई ही होते हैं अपने आपे को खोकर सब वासनाओं को उस पूर्ण ब्रह्म में लय कर देना सहल बात नहीं है परन्तु जो नर रत्न भगवान की दयासे ऐसा करने में समर्थ होते हैं उनकी शक्ति और प्रभा की समानता और तुलना क्या होसकती है! विश्वास से पहाड़ चलने लगते हैं और नदियों का वेग ठहर जाता है। रैदासजी मूर्ति को मूर्ति नहीं समझते थे वह तो सब जगह एक चैतन्य का ही अनुभव करते थे प्रेम से याद करने पर भगवान उठकर रैदास जी की गोदी में आ बैठे। सब को विश्वास हुआ और रैदास जी की अधिक ख्याति हुई। झाली रानी की भी टेक भगवान ने रख ली। उस की भक्ति दृढ हुई।

इस के पश्चात् झाली रानी ने मीड़ता में आकर यज्ञ किया और इस यज्ञ में रैदास जी को भी निमन्त्रण दिया। यह मेड़ता गए। रानी को अपने गुरुके पधारने पर बहुत हर्ष हुआ और उस ने अपना यज्ञ सफल समझा परन्तु ब्राह्मणों ने इस बात को सुन कर अपने लिए रसोई का सामान लेकर स्वयं रसोई बनाई। जब वह लोग भोजन करने लगे तो दो २ ब्राह्मणों के बीच में एक २ रैदास को बैठा पाया। यह देखकर सब के सब लज्जित हुए और रैदास जी के चरणोंमें पड़े और बहुत ब्राह्मण विश्वास युक्त हो कर उन के शिष्य बने। कहते हैं उसी समय रैदास जी ने अपने शरीरको चीर कर जनेऊ दिखाया और अपने पहले जन्म की कहानी सुनाई। सब लोगोंका मोह दूर हुआ।

रैदास जी जैसे भक्त विरले ही हुए हैं इनके चरित्र को पढ़ने और सुनने ही से मनुष्य का अन्तःकरण शुद्ध होता है और आनन्द की वृद्धि होती है॥

काश्मीर यात्रा

काश्मीर सदृशो लोके नास्ति ब्रह्माण्ड सुन्दरम् ।
शारदा सदृशी देवी नास्ति ब्रह्माण्ड गोलके ॥
इत्थं वार्त्ता समाकर्ण्य भाग्यकारी मनोदये ।
काश्मीर मण्डलं गन्तु तनुजाशिष्य संयुतः ॥२॥

काश्मीर जिसको संसार का स्वर्ग कहा जाता है अपने अनुपम दृश्यों के कारण प्रसिद्ध है। वहां के हिमाच्छादित ऊंचे शिखर वाले पर्वत, कलकल २ शब्द करके बहते हुए नाले, आकाश से बात करने वाले लम्बे वृक्ष, मीठे पानी की झीलें और नाचते हुए अनगिनत शीतल जल के चश्मे चित्त को आकर्षण करने वाले हैं। हमारा कई वर्षों से काश्मीर जाने का संकल्प था और हम इसके विषय में श्री गुरुदेव से कई बार प्रार्थना भी करते थे। इस वर्ष उन्हों ने दया की और हम १४ व्यक्ति उन की सेवा में चले। आश्रम से चल कर हम देहली पहुंचे वहां डाक्टर रघुनाथ जी के यहां ठहरे। सत्संगी लोगों का आना जाना आरम्भ हुआ एक बार तो ऐसा प्रतीत होने लगा कि कहीं मन की तरंगे मनही में विलीन न हो जावें। परन्तु वहां कोई १० दिवस पर्यन्त ठहर कर हम सब ने लाहौर को प्रस्थान किया। वहां हम राय बहादुर ला० राम शरणदास जी रईस की कोठी में ठहरे। श्री पूज्य महाराज जी कृपा और राव बहादुर कप्तान बलबीर सिंह साहब की मिलन सारी के प्रताप से हमको सब जगह एक से एक अच्छा स्थान मिलता रहा। लाहौर हम तीन दिन ठहरे। वहां पर भाई परमानन्द जी, पण्डित रघुवर दयाल जी प्रिंसिपल सनातन धर्म कालेज, भक्त ईश्वर दास जी, डाक्टर कपूर आदि प्रतिष्ठित सज्जन श्री महाराज जी की सेवामें उपस्थित हुआ करते थे और उनको श्रीमहाराज जी हिन्दू धर्म के पुनरुद्धार के विषय में उपदेश दिया करते थे।

लाहौर से काश्मीर जाने के दो मार्ग हैं। एक मार्ग तो रावलपिण्डी होकर और दूसरा मार्ग जम्मू होकर। हमने पिण्डी होकर जाने का और जम्मू से लौटने का निश्चय किया। अतः हम लाहौर से रावलपिण्डी गये। वहां हम सरदार बूटा सिंह के मकान पर ठहरे। पिण्डी से श्रीनगर को मोटरकार और लौरी चलती हैं। अतः हम वहां से एक लारी बुक कर के श्रीनगर को रवाना हुये। सरदार जयदेव सिंह जी ने मरी में सरदार मोहन सिंह जी को टेलीफोन कर दिया था। हम दो घंटे में मरी पहुंच गये। वहां सरदार मोहन सिंह जी के यहां भोजन किया और फिर कुछ विश्राम करके पुनः प्रस्थान किया। राव बहादुर साहब ने श्री महाराज जी के आराम का विचार कर के सरदार जी की मोटर श्रीनगर के लिये लेली।

पहाड़ी मार्ग रावल पिण्डी से १४ मील चल कर ही आरम्भ हो जाता है। प्रकृति का सौन्दर्य ऊंचे २ चीड़ और दियार के वृक्षों से

लदे हुए पर्वतों से और भी अधिक हो जाता है। मरी से आगे का टेढ़ा-मेढ़ा पहाड़ी मार्ग शनैः शनैः फिर नीचे को उतरना आरम्भ होता है यहां तक कि कोहाला जो कि काश्मीर महाराज की सरहद पर है, पहुंच कर फिर एक बार ६५०० फीट की ऊंचाई से १६०० फीट पर आजाते हैं। वैसे तो यह सड़क सारी ही सज्जन पहाड़ों तथा वृक्षों से शोभायमान् है परन्तु इसका एक दृश्य बहुत ही वर्णनीय है, पहाड़ों का तो दृश्य सब जगह है ही परन्तु इसके साथ २ छीका गली से लेकर बारह मूला तक सड़क के साथ २ झेलम नदी भी चलती है। एक ओर तो सड़क है उसके दाहिनी ओर अतिवेग से बहता हुआ दरिया है जो कि अधिक नीचे होने के कारण छोटे से छोटा प्रतीत होता है। और उसके सामने कोई २००० फीट ऊंचा पर्वत है। भीरु हृदय पुरुषों को तो यह दृश्य बहुत ही भयावह है। ईश्वर न करें कहीं ड्राइवर की ज़रा भी असावधानि होवे तो न तो मोटर का पता चले और न मोटर में बैठने वालों का। परन्तु सामने के पर्वत हृदय को धीर बन्धाते हैं। इतना ऊंचा पहाड़ होने पर भी उसके शिखर पर पहाड़ी लोग घर बना कर रहते हैं। उनको देख कर हृदय को धीरज होता है। मरी से बारहमूला तक के प्रायः समस्त पर्वतों पर खेती होती है।

हमारा विचार रात को उड़ी पहुंचने का था। परन्तु हमको गढ़ी में ही रात हो गई थी। कुछ वर्षा होने के कारण हम जैसे तैसे चिनारी पहुंचे। वहां पर किसी ने कहा कि वर्षा होने से पहाड़ टूटते हैं अतः हम चिनारी के डाक-बंगले में ठहर गये वहां से प्रातः काल फिर प्रस्थान किया। मार्ग में रामपुर का पड़ाव है। वहां पर इंजीनियरों की बुद्धिमत्ता देख कर चकित होना पड़ता है। रामपुर से ६ मील आगे नदी में से, जो कि ४०० फिट की ऊंचाई पर है, एक नहर निकाल कर रामपुर की पहाड़ी पर लायी गई है। वहां से पानी ऊपर से बड़े वेग से गिरता है जिससे मशीन चलती है जो कि विद्युत पैदा करती है। वहां से ही बिजली श्रीनगर आदि स्थानों में जाती है। सुन्दर पहाड़ों का सिलसिला और नदी का दृश्य बारह मूला में समाप्त हो जाता है। वहां से संसार में मैदान की सब से सुन्दर सड़क आरम्भ होती है। इसके दोनों ओर एक दूसरे के पास पास, ऊंचे २ पोपलर वृक्ष लगे हुये हैं। वृक्षों की शाखायें भी ऊपर आसमान से बात करती हैं। अतः सड़क के एक ओर के वृक्ष दूसरी ओर के वृक्षों से न मिलने के कारण बीच में शोभायमान नील धारा सदृश्य रेखा सी हो जाती है।

हम परमात्मा का गुणानुवाद करते हुये १२ बजे के लगभग श्री नगर में पहुंचे। यहां पर वैसे तो ठहरने के लिये होटलों के अतिरिक्त सनातन धर्म प्रताप भवन, आर्य समाज मंदिर दश नामी अखाड़ा, नारायणमठ, दुर्गानाग मंदिर तथा रामबाग आदि कई स्थान हैं परन्तु जिनको काश्मीर के वास्तविक जलवायु का आनन्द लेना है, उनके लिये हाउस बोट में रहना सब से उत्तम है। जहां चाहो अच्छे से

अच्छे स्थान पर किसी चिनार की छाया में बोट को लगा कर रहो। वहां पर एक खासा बोट ५०) अथवा ६०) रुपये में मिल सकता है। परन्तु हम तो श्रीमहाराज जी के साथ में थे। उनकी कृपा से रायबहादुर साहब को यहां पर भी वितस्ता (झेलम) के किनारे पर एक बहुत ही उत्तम स्थान मिल गया। यह स्थान दीवान अमरनाथ जी का था। दीवान साहब सारी रियासत में सब से प्रतिष्ठित पुरुष थे। एक समय था कि समस्त काश्मीर में इन्हीं की तूती बोलती थी। परन्तु हे प्रभु! तेरी महिमा अपार है। कौन कह सकता है कि कल को क्या होगा? किस को विदित था कि यह जलता हुआ दीपक असमय में ही अबला स्त्रियों और कन्याओं को छोड़ कर गुल हो जायगा। केवल चौदह मास के अन्तर में ही पिता पुत्र दोनों का देहान्त हो गया। अब उनकी साध्वी, पतिव्रता, सती स्त्री तथा उनके एक निकट सम्बन्धि लाला रामनाथ जी बड़ी निपुणता के साथ सारे काम काज की रेख देख करते हैं।

हमने कुछ दिन वहां रहने के पश्चात् एक बोट लिया और उसमें ५, ७, दिन की खाने पाने की सब सामग्री रख कर खीरभवानीके दर्शनार्थ प्रस्थान किया। बोट शनैः शनैः चलता था। इस हेतु हम पहले दिन शादीपुर तक ही पहुंच पाये। यह स्थान काश्मीर का प्रयाग है नदी के बीच में एक घनका चिनार का वृक्ष है। वहां से हमने प्रातः काल खीर भवानी के लिये प्रस्थान किया। वहां पहुंच कर हमने खीर भवानी के दर्शन किये। वहां पर एक पक्का चबूतरा है। उसके बीच में एक कुण्ड है जिसमें से एक चश्मा निकलता है। उस कुण्ड के मध्य में खीर भवानी का छोटा सा मंदिर है। कहते हैं चश्मे का पानी रंग बदलता है परन्तु हम इसके विषय में कुछ नहीं कह सकते। हां, इतना तो अवश्य कहेंगे कि यदि पण्डे महाशय कभी कभी उस कुण्ड के जल को साफ कर दिया करें तो देवी जी और उनके साथ २ में उन के भक्तलोग उस जल की दुर्गन्धी से बच सकते हैं।

खीर भवानी से हमने सोमबल और मानसबल को प्रस्थान किया। सायंकाल को सोमबल ठहरे। यह कोई विशेष उल्लेखनीय स्थान नहीं है। वहां से हम शिकारों में मानसबल झील देखने को गये। यह काश्मीर में सब से सुन्दर झील है। इसका जल बहुत ही साफ है। यहां तक कि जल के बहुत नीचे जिस रंग की घास है उसी रंग का जल दिखाई देता है जो कि देखने में बहुत ही सुन्दर प्रतीत होता है। सोमबल से वुलर लेक को दरिया जाता है परन्तु हम कई कारणों से बोट में वुलर लेक नहीं जा सके। हम वुलर लेक देखने को मोटर और मोटर लौरी में गये थे। वुलर झील भारत में सब से बड़ी मीठे पानी की झील है। हम इसको किनारों पर से ही देख सके कारण कि इसमें मध्यान्ह काल के पीछे हवा का भय होता है। यहां

से झेलम नदी सोपुर होती हुई बारहमूला जाती है।

मानस बल रात को ठहर कर हम फिर श्रीनगर को रवाना हुये। जहां कहीं अच्छा स्थान देखते वहीं बोट लगा कर रात को ठहर जाते। इस प्रकार से हम श्रीनगर फिर पहुंच गये। जिस मकान में हम ठहरे हुए थे उसके सामने ही शंकराचार्य का मन्दिर था अतः हम एक दिन शंकराचार्य जी के मन्दिर के दर्शनार्थ भी गये। यह मन्दिर अमीरा कदल से लगभग १॥ मील की दूरी पर श्री नगर से कोई १००० फीट की ऊंचाई पर शंकराचार्य नामक पहाड़ी पर बना हुआ है। इसकी चढ़ाई दुर्गानाग से आरम्भ होती है। हम जिस समय इस पहाड़ी पर चढ़े थे तब बड़ी कड़ी धूप थी। सारे रास्ते में कोई छाया नहीं थी। जब हम लगभग बीच में पहुंचे तब हमको एक चिनार का वृक्ष मिला जिसके नीचे ठहर कर हमने कुछ समय विश्राम किया। फिर वहां से ऊपर चढ़े। मन्दिर के आस पास भी कुछ वृक्ष लगाये गये हैं मन्दिर में शिवजी की विशाल मूर्ति के दर्शन किये। मन्दिर के चारों ओर एक चबूतरा बना हुआ है जिस पर से समस्त श्रीनगर भली प्रकार दृष्टिगोचर होता है। महाराज मैसोर ने मन्दिर के चारों ओर, ऊपर तथा भीतर बिजली लगा दी है जिससे रात्रि के समय मन्दिर श्याम पर्वतों में चमकते हुये हीरे की भान्ति प्रतीत होता है।

श्रीनगर में डल की सैर प्रसिद्ध सैर है। यात्री लोग शिकारा किराये करके डल की सैर को जाते हैं। इस डल ही के कारण काश्मीर को भारत का स्विटज़रलैण्ड कहते हैं। हमने दो शिकारे किराये किये और अपने खाने पीने का सामान लेकर प्रातः काल डल की सैर को निकले। डल अमीरा कदल से ४ मील है। हमने डलगेट से डल में प्रवेश किया और फिर वहां से कुछ समय के पश्चात् डल में पहुंच गये। डल के मध्य में एक छोटा सा द्वीप है जिस पर कुछ वृक्ष भी हैं उसके पास होते हुए हमने शिकारे एक रमणीक जंगल में किनारे लगवाये और वहां भोजनादि से निवृत्त होकर निशात बाग की ओर चले। यह बाग़ जहांगीर के प्रधान मन्त्री ने बनाया था। इस बाग की रंग बरंगी फूलों की क्यारियां, नाचते हुये अनेक फव्वारे, विशाल चिनार के वृक्ष तथा घास का मखमली फर्श बहुत ही चित को लुभाने वाला है। इस बाग तक आने में ही हमें बहुत समय लग गया था अतः हम नसीम और शाला बाग न जा सके। इसी बाग को देख कर हम वापिस लौटे। थोड़ी ही दूर चले थे कि प्रचण्ड वायु चलने लगी शिकारे वाले मांझी डरे कि कहीं वायु के वेग से शिकारा डूब न जाय। परन्तु श्री महाराज जी का हाथ हमारे शिर पर था। उन्हों ने आशीर्वाद दिया और मांझियों से कहा कि कोई बात नहीं है चलो सब भगवान् सहाय करेंगे, उनकी महती अनुकम्पा के प्रभाव से हम सब सकुशल

डलगेट होकर सायंकाल को अपने स्थान पर पहुंच गये।

हम डल की सैर वाले दिन शालामार और हार्वन लेक नहीं जा सके थे। अतः एक दिन मोटर और लौरी में शाला और हार्वन गये। यह बाग निशात से दो मील की दूरी पर जहांगीर बादशाह ने बनाया था। यह बाग भी निशात बाग से कम सुन्दर नहीं है। शालामार से तीन मील की दूरी पर हार्वन लेक है। किनारे पर वाटर वर्क्स का कारखाना है जहां से श्री नगर को नल जाता है। इसका जल बहुत शीतल और स्वादिष्ट है इससे ऊपर महाराजा साहब का रख (वन) है जिस में बिना आज्ञा प्रवेश निषिद्ध है।

इन सब रमणीक स्थानों को देखते हुए हम सायंकाल को लौट आये। हम सबों ने निश्चय किया कि अब कुछ समय हाउस बोट में भी रहना चाहिये। अतः हमने दो बोट लिये और उनको एक रमणीक स्थान में लगाया। वहां से हम एक मोटर और लारी लेकर पहलगांव देखने गये। यह स्थान कोई ८००० फीट की ऊंचाई पर है चारों ओर हिमाच्छादित श्वेत पर्वत हैं यहां पर तो शीत काफी होता है। गर्मी के दिनों में जब श्री नगर में गर्मी अधिक होती है तो लोग यहां अथवा गुलमर्ग चले जाते हैं। गुलमर्ग की अपेक्षा यहां पर यह विशेषता है की यहां किसी की निजकी भूमि नहीं है, न कोई पक्का मकान है। किराये पर तम्बू मिलते हैं। जो चाहे तम्बू लेकर जहां चाहे लगा कर रहे किसी प्रकार की कोई रोक टोक नहीं है। चीड़ के वृक्ष बहुत हैं। शेषनाग का एक स्वच्छ शीतल नाला आता है। हम यहां पर कोई तीन घंटे ठहर कर वापिस रवाना हुए। रास्ते में मटन है। वहां पर भी एक चश्मा है और हिन्दुओं का तीर्थ है। अमरनाथ जी के पण्डे यहां पर ही रहते हैं। मटन से चल कर अनन्तनाग आये यहां का शीतल स्वच्छ चश्मा देख कर अच्छाबल गये। यहां पर भी एक सुन्दर चश्मा है। राजा का बाग है। एक से ऊंचा दूसरा इस प्रकार तीन कम्पाउण्ड हैं। फव्वारे लगे हुये हैं, पानी का दृश्य बहुत ही सुहावना है। भगवान् की विचित्र लीला है। इन चश्मों को देखो कि किसी प्रकार से भूमि में से एक जल की नदी सी निकलती है। भगवान् की विचित्र सृष्टि की विचित्रता तो इसी से झलकती है।

इसके पश्चात् हम पाम्पुर की केशर की क्यारियों में पहुंचे यह पीली सरख मिट्टी के क्षेत्र हैं। कुछ खुश्की और ऊंचाई पर हैं। मिट्टी अपने यहां की साधारण मिट्टी के सदृश्य है परन्तु भगवान् ने उस मिट्टी में कोई विचित्र शक्ति डाली है। जिससे केशर वहां होती है यहां नहीं।

इन सब दृश्यों को देखते हुए हम १०॥ बजे अपने बोटों पर पहुंचे।

इसके अतिरिक्त गुलमर्ग चश्माशाही (हम

चश्माशाही नहीं जा सके क्यों कि वहां पर महाराज के द्वितीय विवाह के अर्थ जम्मू से आया हुवा एक डोला ठहरा हुआ था अतः प्रवेश निषिद्ध था) गान्धरबल, परी महल, सोने मार्ग अजायबघर, चिनार बाग, रेशम का कारखाना, वेरीनाग आदि अनेक स्थान देखने के योग्य है।

अमरनाथ की यात्रा के दिन नज़दीक आने, लगे। परन्तु हमारे भाग्य में अमरनाथ जी के दर्शन नहीं थे। अतः हमने कई कारण उपस्थित होने से वापिस देश लौटने का विचार किया। हाउस बोट छोड़ कर फिर दीवान साहब के मकान में आगये। वहां के प्रतिष्ठित लोगों को श्री महाराज जी में बहुत श्रद्धा हो गई थी। राजा सर दयाकिशन कौल, पोष्ट मास्टर, शर्मा साहब (भूत पूव दीवान) सिटी मैजिस्ट्रेट, प्रोफेसर ज्ञानी रामजी, ला० किशोरी लाल जी आदि कई प्रतिष्ठित सज्जन सत्संग में आया करते थे। उनके आग्रह करने पर कुछ दिन और ठहर कर हम जम्मू के मार्ग से चले। मार्ग में पीर पंचाल के पर्वतों की शिखर के दृश्यों से मन हर्षित हो उठा। शीतल समीर और घनाच्छादित पर्वत बहुत ही सुहावने प्रतीत होने लगे। ज्यों ज्यों ऊपर पर्वत पर चढ़ने लगे त्यों त्यों मेघमण्डल पास आने लगे। ओहो! अबतो हम मेघों के बीचों बीच चलने लगे। लो! अब तो हम ऊपर और मेघ नीचे! आहा! क्या ही सुहावना दृश्य था। धन्य प्रभु धन्य। परन्तु यह दृश्य बहुत देर नहीं रहा। ज्यों ज्यों नीचे उतरे त्यों त्यों प्रकृति माता ने विकट रूप धारण करना आरम्भ किया कहां तो पीर पंचाल का शीतल स्थान और कहां रामबन का सूर्य के आतप से प्रताडित उष्ण प्रदेश बस! भगवान् की दया के अतिरिक्त वहां और कोई अवलम्बन नहीं था। सब के शरीरों को सूर्य का आतप प्रताड़ित करने लगा। मार्ग में जहां पर्वतों से झरने गिरते हैं वहां मोटर का पानी बदलने को हौज़ बने हुये हैं। हममें से कुछों ने वहां स्नान किया। परन्तु इससे क्या होता था? अनन्त दयामय भगवान् ने करुणा का हाथ प्रसारित किया। क्षणमात्र में आकाश घनाच्छादित हो गया। और उस स्थान से लेकर जम्मू में दीवान साहब के मकान पर दो रात्रि ठहरते हुए हम भगवत् कृपा प्रदत्त घनछत्र के नीचे ही नीचे पुनः आश्रम में आपहुंचे।

लेख का कलेवर बहुत बढ़ गया प्रकृति देवी ने हिमालय के इस कोण पर भारत का ही नहीं संसार का स्वर्ग बनाया है परन्तु शोक के साथ लिखना पड़ता है कि जिस देश में प्रकृति देवी इतना सुन्दर रूप धारण किये बैठी है, जहां मिट्टी की सड़कों के स्थान में जल की सड़कें हैं वहां की आर्थिक तथा सामाजिक अवस्था बहुत ही करुणा के योग्य है। यह देश नवीन महाराज की ओर कृतज्ञ नेत्रों से सुधार की आशा लगाये बैठा है। हमारी ईश्वर से यही प्रार्थना है कि नवीन महाराज के

अधिपत्ति में देश की दशा दिन प्रतिदिन सुधरे।

(भूमानन्द ब्रह्मचारी)

मित्र, मित्र के लाभ और लक्षण।

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः सुपर्णो गरुत्मान्। एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वा न माहुः॥

ऋ० १, १६४, ४६

हमारे वेद और शास्त्र तथा पुरान इस बात पर पूरा बल लगाते हैं कि सब मनुष्यों को परस्पर मित्रता रखनी चाहिये। आत्मवत् सर्व भूतों के साथ प्रेम करना चाहिये। समष्टि प्रेम के प्रवाहित होने से पहले कुछ चुने हुए मित्र अवश्य बनाने चाहियें। एक महात्मा ने कहा है कि जिस के अच्छे मित्र हैं उसको भोजन वस्त्र हैं या नहीं इसकी आवश्यकता नहीं है जिस के सर्व दिशाओं में मित्र हैं उसको देशाटन में कोई कष्ट नहीं होता है। वेद में प्रार्थना है कि:-

"सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु"

सब दिशाओं में मेरे मित्र होवें।

यजुर्वेद में कहा है:-

"मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे"

हम परस्पर मित्र की आंख से देखें। ऋग्वेद में कहा है:-

"मित्रे कृणध्वं खलु"

परमेश्वर कहते हैं हे जीवो! तुम निश्चय कर अपने मित्र बनाओ। सच्चा मित्र तो अपना परमात्मा है उसी से अपनी मित्रता करनी चाहिये, सब पदार्थों से बढ़ कर उन से प्रेम करना चाहिए। जो मित्रता अर्थात् प्रेम स्त्री पुत्रों का है उस से बढ़ कर जो माता, पिता, बन्धु, बान्धव, अपना शरीर, पुष्प, तारे सौन्दर्य अभिव्यञ्जक आदि वस्तुओं से अधिक तर प्रेम हमारा परमेश्वर के साथ होना चाहिये तभी हमारा कल्याण होगा। पर इकदम प्रासाद के ऊपर आरोहण नहीं हो सकता। पहले हम प्रथम सोपान पर चढ़ते हैं तत्पश्चात् भवन की पटल पर जा विराजते हैं। ठीक इसी भान्ति अपने ख़ास २ मित्र बनाकर उन का अहैतुक हित चिन्तन करना चाहिये। रामजी कहते हैं-

निज दुःख गिरि सम रजकै जाना॥
मित्रक दुःख रज मेरु समाना।

मित्र के थोड़े दुःख को भी बहुत सा मानना, और अपने अधिक दुःख को भी थोड़ा मानना हर प्रकार से उसकी सहायता करना सन्मित्र का लक्षण है भर्तृहरि ने कहा है कि मित्रता दूध और जल के सदृश होनी चाहिये। पानी जैसी कम क़ीमत वाली चीज़ जब दूधके साथ में मिल जाती है तो दूध अपना गुण और रूप उसको देदेता है और वह दूध के मोल बिकता है। हलवाई कढ़ाई में भर अग्नि पर तपाता है तो पानी पहले आप जलता है दूध को नहीं जलने देता। दूध यह जान कर कि मेरा

मित्र अग्नि ने जला दिया तो उसे बुझाने के लिए अग्नि में कूद पड़ता है तब हलवाई पानी के छींटे देता है। दूध अपने मित्र को आया हुआ जान नीचे बैठ जाता है। यही मित्रता का लक्षण है। यजुर्वेद के ६ वें अध्याय में नौ के अङ्क से मित्र की उपमा दी है कि:-

"मित्रो नवाक्षरेण"

तुलसी दास जी कहते हैं:-

शठ सज्जन हित अष्ट नव अङ्क समान विचार।
द्विगुण करत पुनि चतुर्गुण घटत रहत इक सार॥

शठ और सज्जन की मित्रता आठ और नौ के अङ्क के समान है। शठकी उपमा आठ के अङ्क के साथ है। प्रथम तो एक कम है ही दूसरे आठ दूनी सोलह जोड़ देने पर १ और ६ सात ही रहा। नौ दूनी अठारह एक और आठ नौ। नौ तीए २७ दो और सात नौ, नौ चौका ३६ तीन और छ नौ। सज्जन की मित्रता नौ के अंक की भान्ति एक रस रहती है और असज्जन की घटती और बढ़ती रहती है। सज्जन की मित्रता सुवर्ण घट के समान है जो दुर्भेद्य कठिनता से टूटती है और टूटी हुई सुगमता से जुड़ जाती है। असज्जन की मृत्का के घट के समान है जो थोड़ी चोट से टूटने पर फिर नहीं जुड़ती। यथा :-

मृद्घटवत्सुख भेद्यो दुःसन्धानश्च दुर्जनो भवति।
सुजनस्तु कनक घटवद्दुर्भेद्यश्चाशु संधेयः॥

शठ सज्जन की मित्रता दिन की पूर्वार्द्ध और परार्द्ध छाया के समान है वह घटती जाती है और परार्द्ध बढ़ती जाती है। यथा:-

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण,
लघ्वी पुरा वृद्धिमति च पश्चात्।
दिनस्य पूर्वार्द्ध परार्द्ध भिन्ना,
छायेव मैत्री खल सज्जनानाम्॥

मित्र के लक्षण:-

ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति।
भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीति लक्षणम्॥

देना, ग्रहण करना गुह्य कहना, और गुह्य पूछना, भोजन करना और और करवाना इस प्रकार से प्रीति के छः लक्षण हैं:-

किं चन्दनैः स कर्पूरैस्तु हिमैः किञ्च शीतलैः।
सर्वे ते मित्रगात्रस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥

चन्दन, कपूर, हिम और शीतल पदार्थ मित्र के शरीर की सोलहवीं कला के भी तुल्य नहीं है।

केनामृतमिदं सृष्टं मित्र मित्यक्षरद्वयम्।
आपदश्च परित्राणं शोकसन्ताप भेषजम्॥

आपत्ति से बचाने वाले और शोक संताप की औषध रूप अमृत के समान "मित्र" यह दो अक्षर किस ने बनाये हैं।

मित्रवान्साधयत्यर्थान्दुःसाध्यानपि वैयतः।
तस्मान्मित्राणि कुर्वीत समानान्वेष चात्मनः॥

मित्रवान् मित्र की सहायता से कठिन कार्यों को भी सिद्ध कर लेते हैं इस कारण अपने समान मित्र सब को करने चाहियें।

प्राप्ते भये परित्राणं प्रीति विस्रम्भ भाजनम्।
केन रत्नमिदं सृष्टं मित्र मित्यक्षरद्वयम्॥

भव में रक्षा, प्रीति और विश्राम के पात्र यह रत्नरूपी दो अक्षर "मित्र" किसने निर्माण किए हैं।

पापान्निवारयति नियोजयते हिताय।
गुह्यान्गुह्यति गुणान्प्रकटी करोति।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले।
सन्मित्र लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः॥

पापों को दूर करे, हित कार्य में नियुक्त करे, गुप्त बात को गुप्त रक्खे, गुणों को प्रकट करे, आपत्ति में परित्याग न करे और समय पर सब प्रकार की सहायता दे यह सज्जनों ने अच्छे मित्र के लक्षण कहे हैं।

परोक्षे कार्य हन्तारं प्रत्यक्षे प्रिय वादिनम्।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयो मुखम्॥

जो परोक्ष में कार्य का नाश करे और प्रत्यक्ष में प्रिय भाषण करे ऐसे मित्र का पयोमुख विषघटवत् त्याग कर दे।

मित्र द्रोही कृतघ्नश्च यश्च विश्वास घातकः।
ते नराः नरके यान्ति यावच्चन्द्रदिवाकरौ॥

मित्रद्रोही, कृतघ्न और विश्वास घाती जब तक सूर्य शशि हैं तब तक नरक में जाते हैं।

इस मित्रता का पूरी भान्ति निर्वाह किया जाय तो इस से भगवान् के दर्शन और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

ओंकार महिमा।

ओंकारं बिन्दु संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नमः॥

मनुष्यको चाहिए कि परमात्मा की भक्ति करें। "भजनं भक्ति" परमेश्वर के गुणानुवाद को गाना, उन के नाम का जप करना और उनके भक्तों की सेवा करना भक्ति कहाती है। एक ओंकार ही परमेश्वर का ऐसा नाम है जिस में परमेश्वर के अनन्त गुण और नाम ग्रहण हो जाते हैं। परमात्मा 'ओं' नाम जपने से प्रसन्न होते हैं, प्राणोंकी गति ऊर्ध्व गामिनी होती है, प्रकृति की सृष्टि में 'ओं' शब्द की ध्वनि सर्वत्र शीघ्र गामिनी होती है, परमाणुओं में जो उसकी उन्नति को रोकने में प्रतिबन्धक हैं उसके अशुभ कर्मों के चित्रों को नाश करके मोक्षधाम को पहुंचा देता है। ऊपर मकान पर चढ़ा हुवा कोई बालक तोतली वाणी में अपने माता पिता को पुकारता है कि मुझे गिरने से बचाओ। इसको सुन कर माता पिता सब काम छोड़ देते हैं और उसको गिरने से बचा कर छाती से लगा लेते हैं। उसका शिर सूंघते और पुचकारते हैं। इसी प्रकार 'ओं' के जपने से परमात्मा उन्हें संसार की यन्त्रणाओं से छुड़ा कर परम धाम देते हैं। अतएव "ओं सोऽहं" ओं सोऽहं, ओं सोऽहं, इस मन्त्र का जाप करना चाहिये। श्रद्धा भक्ति से निरन्तर जप करने वाले को परमात्मा का साक्षात् ज्ञान हो जाता है, सब सिद्धियें प्राप्त होती हैं, जीवन

दीर्घ हो जाता है, मन की शक्ति शिथलाती जाती है, सब रोग दूर हो जाते हैं, वायु, और आकाश में लहरें चलने लग जाती हैं और अद्भुत प्रकार का प्रकाश दीखने लगता है। इस प्रकार अनन्त लाभ प्राप्त होता है। इसको एकान्त स्थान में मकान में जाकर तारतम्यता की रीति से उच्चारण करे। फिर प्राणों के साथ इस जाप की ध्वनि को एक करके जपना चाहिये। जब भीतर को श्वास लें तब 'ओं' कहना चाहिए और बाहर को श्वास निकालते समय 'सोऽहं' कहना चाहिए। फिर प्राण स्वयं इस को जपते हुए दिखाई देंगे। ऋग्वेदादि सब वेद, शतपथादि ब्राह्मण, उपनिषद् शास्त्र, दर्शन और पुराण सब 'ओं' की ही व्याख्या है। अतः 'ओं' के पाठ करने से, जप करने से सब के पाठ का महात्म्य मिलता है। ओंकार के बिना इन के पाठ करने का फल नहीं मिलता है। परमात्मा के सारे नाम 'ओं' से ही बने हैं। व्याकरण की रीति से "हकारंच सकारंच लोपयित्वा" सोऽहं नामसे ओं ही शेष रह जाता है। इसी प्रकार राम में रकार का उकार के साथ में व्यत्यय करने पर ओं ही अवशेष रहता है। जब प्रजापति के शिर कट जाने पर बकरे का शिर रक्खा गया तब 'बं बं बं' भगवत् का यह नामोच्चारण किया। इस से महादेव बहुत प्रसन्न हुए। यहां भी बकार उकार से बदल कर ओं का ही बं बं नाम है जैसे लोग कहते हैं बं बं महादेव। इसी प्रकार ओं के जपने से सारे नामोंके जपने का फल मिलता है। मनके वश करने का भी उपाय जैसा 'ओं सोऽहं' का जाप है वैसा और नहीं है। यह इस दृष्टान्त से भी समझना चाहिए। दृष्टान्तः-

एक नगर में कोई महा धनाढ्य सेठ रहता था। एक दिन उस के निकट एक शस्त्रधारी मनुष्य नौकर रहने के लिए आया। साहूकार ने कहा कि तू नौकर रहेगा? उसने उत्तर दिया कि हां; परन्तु शर्त यह है कि जब मुझे काम न बतलाओगे तब मैं अपने शस्त्र से तुम्हारा शिरच्छेदन कर दूंगा। उस ने कहा हमारे कामों का क्या अन्त है हुन्डी परचे के कामके लिए हमने इसको बम्बई कलकत्ता भेज दिया तो बहुत दिनों में आवेगा। फिर अनेक काम हैं किसी में भी नियुक्त कर दिया जायगा। यह समझ कर उसकी शर्त स्वीकार करली। पुनः उसको कहा कि अमुक काम करने के लिए अमुक नगर में जा। वह गया और सब काम कर शीघ्र ही आ गया। फिर कहा बता काम? यह सुन साहूकार विस्मित हुआ यह मनुष्य नहीं कोई भूत है। उस ने भय भीत होकर बम्बई कलकत्ता का काम बताकर भेज दिया, परन्तु उसको बड़ी चिन्ता हुई कि इससे किस प्रकार पिण्ड छूटे। हे परमात्मन् कोई स्याना महात्मा मिले जो इस से छूटनेकी युक्ति बतलावे। यह तड़फ कर बड़ी चाह थी इतने में कोई महात्मा जो पूर्व काल में उस के चौबारे में रह चुके थे अकस्मात् आ गये। उनके दर्शनसे उसको आश्वासन हुवा। महा-

त्मा ने पूछा आप दुबले और दुःखी से किस कारण हैं। यह सुनकर वह सेठ रोकर महात्मा के चरणों में गिर गया फिर सब दुःख उनको निवेदन किया। उन्होंने धीरज बन्धाते कहा कि यह सब दुःख दूर हो जावेगा हम ऐसा मन्त्र बतलावेंगे जिस से भूत तुम्हारा कुछ भी बिगाड़ नहीं करेगा। तुम्हारे कहने में हो जावेगा। अबकी बार जब वह आवे तो कहना कि समुद्र के किनारे से तेतीस हाथ का बांस लाओ, जब वह ले आवे तब दस हाथ इसको पृथिवी में गाड़ने को कहो। फिर तेइस हाथ शेष रहा तब उससे कहना कि इस पर चढ़ो और उतरो। जब हार जाओ तो नौकरी छोड़ चले जाना। तब तुम सुखी हो जाओगे। इतने ही में भूत आगया। साहूकार से कहा "बताओ काम नहीं तो करता हूं मैं तुम्हारा काम तमाम"। यह सुन कर साहूकार ने महात्मा के कथनानुसार काम बताया और कहा कि अब हमारे पास इसके अतिरिक्त और कोई काम नहीं है बस इस पर उतरो और चढ़ो। वह उस पर उतरने चढ़ने लगा। साहूकार उस से निश्चिन्त हो परम सुखी होगया। दार्ष्टान्त में यह जीव साहूकार और मन भूत है। जब इस मन रूपी भूत को कोई काम नहीं बतलाया जाता तब ठाली होकर इसका बिगाड़ करने लग जाता है। इस से जीवात्मा दुःखी होकर जिज्ञासु बन किसी महात्मा से पूछता है कि मेरा मन कभी कहीं जाता है कभी कहीं जाता है, कभी किसी पदार्थ को चाहता है कभी किसी को। एक जगह नहीं लगता। महात्मा कहते हैं कि प्रकृति ही समुद्र है और शरीर के पृष्ठ भाग में लगी हुई तेतीस गांठ, दिमाग से लटकती हुई हाथीकी सूंड और प्राण वही बांस हैं। ओं सोऽहं का जपना उतरना और चढ़ना है। जब मन इस में लग गया तब जीव रूपी साहूकार मुक्त भया। इस लिए इस मन्त्र का जप करना चाहिए। वेद, शास्त्र और महात्मा इसी को सब का सार बतलाते हैं। ऋग्वेद के अन्त में जिसे वेदान्त कहते हैं कहा है 'ओं खं ब्रह्म' उसी में परमात्मा उपदेश करते हैं 'ओं स्मर' शतपथ में और बृहदारण्यक उपनिषद् में लिखा है 'वेदोऽयं' यही वेद है। कठ में कहा है:-

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम्।

इस ओंकार का आलम्बन परम श्रेष्ठ है।

गोपथ में कहा है:-

तस्मादोंकार ऋचि ऋग्भवति यजुषि यजुः साम्नि सामः सूत्रेषु सूत्रम्, ब्राह्मणे ब्राह्मम् श्लोके श्लोकः प्रणवे प्रणव इति।

ओंकार ही ऋग्वेद में ऋग्वेद, यजुर्वेद में यजुर्वेद, साम में साम, सूत्र में सूत्र, ब्राह्मण में ब्राह्मण, श्लोक में श्लोक और प्रणव में प्रणव है। अकार उकार मकार इन तीनोंका एक ओंकार है।

ओमादित्यसौ योऽसौ तपति (ऐतरेय)

यह सूर्य ओंकार है।

'ओंकारेवेदं सर्वम्'

यह सब ओंकार ही है इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं यह चिन्तन करे। साहस कर-

था और उसमें प्रतीत होने वाला और उस का अभिमानी विश्व वैश्वानर, ऋग्वेद, कर्मकाण्ड, भू लोक यह सब कुछ मैं हूं यह अकार मात्रा का चिन्तन है। स्वप्नावस्था, उस में प्रतीत होने वाला जगत् और उस का अभिमानी तैजस, हिरण्य गर्भ यजुर्वेद उपासना कांड सब कुछ मैं हूं ऐसा चिन्तन उकार मात्रा का चिन्तन है। सुषुप्ति अवस्था, उस में होने वाला ज्ञान अज्ञान, इन्दों का साक्षी ईश्वर और प्राज्ञ, साम वेद, ज्ञान काण्ड सब कुछ मैं हूं ऐसा चिन्तन मकार मात्रा का चिन्तन है। तुर्यावस्था, उस में होने वाला आनन्द और ज्ञान, तुर्यातीत अनुभव उसका साक्षी अज्ञात अज्ञेय, सब कुछ मैं हूं ऐसा चिन्तन अर्ध मात्रा का चिन्तन है। सर्वोऽहमस्मीति उपासीत् तद्व्रतम्।

सब कुछ मैं हूं यह व्रत है। ओंकार को अपने से अभेद समझ जपे।

"जपै जाप कटै पाप, अलख निरञ्जन आप ही आप" गीता में कहा है:-

तस्मात् ओं इत्युदाहृत्य यज्ञ दानतपः क्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥

ओंकार यह कह कर ब्रह्म वादियों की खाना पीना, चलना फिरना, यज्ञ, दान, तपादि सब क्रियायें प्रवृत्त होती हैं। अर्थात् प्रत्येक काम ओंकार को उच्चारण करके आरम्भ करते हैं। जैसे:-

ओं तत्सत् इति मन्त्रेण यो यत्कर्म समाचरेत्।
गृहस्थो वाप्युदासीनः तस्याभीष्टा तद्भवेत्॥

वेद में कहा है:-

ओं अदामः ओं पिबामः देवो वरुणो प्रजापतिः।

और भी उपनिषदों में कहा है कि बारह हजार ओंकार नित्य एकान्त में जपे तो एक सम्वत्सर में परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं।

अब हम दो महात्माओं के भजन लिख कर अलम् करते हैं।

भजन

अनुभव स्वरूप निज रूप लखा जिन,
 ओ३म् सोऽहं रटा रटा रे॥ टेक॥
अक्षय धन सम्पत्ति मिल जावे,
 तृष्णा कबहूं मन न डुलावे।
कर सन्तोष बैठ रहो घर में,
 बाहर फिर मत उठा उठा रे॥ १॥
शान्त चित्त निर्मल बुद्धि होवे,
 वृथा कल्पना मन की खोवे।
अन्तर बाहर उज्वल करले,
 मल बाधा को छुटा छुटा रे॥ २॥
राग द्वेष के फन्द कट जावें,
 चहुं दिशि समता भाव दर्शावें।
निश्चय यही एक मन राखो,
 जग से दृष्टि हटा हटा रे॥ ३॥
नाम रूप गुण लखे न जावें,
 सत् चित् आनन्द भरम नसावें।
माखन माखन खालो प्यारे,
 छोड़दो सब मठा मठा रे॥ ४॥

२

भजन में होत आनन्द आनन्द॥टेक॥
बरसें शब्द अमीके बादल भीजें सहरम सन्त।

अगर बास जहाँ तकी नदियाँ बहत धारागङ्ग। कर अस्नान मग्न हो बैठे चढ़ा शब्दका रङ्ग ॥ तेरा साहब है तेरे माँहीं पारस परसे अङ्ग ॥४ कहत कबीर सुनो भाई साधो जपले ओङ्गसोहङ्ग।

पूर्व काल में कहानियां द्वारा विज्ञान की शिक्षा।

पूर्व काल में हमारी मातायें अपनी सन्तानों को कहानी पहेलियों में अति उत्तम शिक्षा और धर्म का भाव कूटकूट कर भर देतीं थीं। जिससे सन्तान की बुद्धि का विकाश और विचार शक्ति का प्रकाश सुलभता से प्राप्त होता था। इस विषय पर हम लोक और वेद के मन्त्र और वचन उद्धृत किये देते हैं। आशा है पाठकगण लाभ उठायेंगे और अपने गृहों में कहानियों की प्रथा को पुनः प्रचलित करेंगे।

कः स्विदेकाकी चरति क उ स्विज्जायते पुनः।
किं स्विद्धिमस्य भेषजं किम्वापनं महत् ॥

कौन अकेला विचरता है, कौन फिर पैदा होता है, हिम की औषधी क्या है और बड़ा बीज बोने का क्षेत्र क्या है?

सूर्य एकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुनः।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावपनं महत् ॥

सूर्य अकेला विचरता है, चन्द्रमा फिर पैदा होता है, अग्नि हिम की औषधी है और भूमि बीज बोने का बड़ा क्षेत्र है।

का स्विदासीत्पूर्व चित्तिः किं स्विदा सीत् बृहद्वयः। का स्विदासीत्पिलिप्पिला रात्रिरासी त्पिशङ्गिला ॥

पूर्व चिन्ता का विषय कौन है, बड़ा उड़ने वाला पक्षी कौन है, चिकनी वस्तु क्या है, और रूप का निगलने वाला कौन है?

द्यौरासीत् पूर्व चित्तिरश्वरासीत् बृहद्वयः।
अविरासीत्पिलिप्पिला रात्रिरासीत्पिशङ्गिला ॥

द्यौ पूर्व का चिन्ता विषय है, अश्व बड़ा गमन करने वाला पक्षी है, पृथिवी बड़ी चिकनी है और रात्रि रूप को निगलने वली है।

किं स्वित्सूर्य समं ज्योतिः किं समुद्र समं सरः।
किं स्वित्पृथिव्यै वर्षीयः कस्य मात्रा न विद्यते॥

सूर्य के समान ज्योति क्या है, समुद्र के समान सरोवर क्या है, पृथिवी से बड़ा क्या है और किसका परिमाण नहीं है?

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योति द्यौं समुद्र समं सरः।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते॥

ब्रह्म सूर्य के समान ज्योति है, द्युलोक समुद्र के समान सरोवर है, इन्द्र पृथिवी से महत्तर है और गौ का परिमाण नहीं है।

इस प्रकार यजुर्वेद में और भी बहुत सी कहानियां और पहेलियां हैं जिनसे ज्ञान का तो ज्ञान बढ़ता है और साथ साथ में बुद्धि का भी विकाश होता है क्योंकि उसका उत्तर सोचने के लिये मनुष्य को अपनी बुद्धि पर

ज़ोर देना पड़ता है। अब इस अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों से कहानियां लिखते हैं।

किं स्विद्गुरुतरं भूमेः किं स्विदुच्चतरञ्च खात्। किं स्विच्छीघ्रतरं वायोः किं स्विद्बहुतरं तृणात्॥

भूमि से भारी, आकाश से ऊंचा, वायु से वेगवान् और तृणों से अधिक संख्या वाला क्या है?

माता गुरुतरा भूमेः खात् पितोच्चतरस्तथा। मनः शीघ्रतरं वाताच्चिन्ता बहुतरी तृणात्॥

माता पृथिवी से भारी है, पिता आकाश से ऊंचा है, मन वायु से अधिक वेग वाला है और चिन्ता तृण से भी अधिक है।

किं स्वित्सुप्तं न निमिषति किं स्विज्जातं न चोपति। कस्य स्विद्धृदयं नास्ति किं स्विद्वेगेन वर्धते॥

सोते हुए आंख कौन नहीं मीचता, कौन पैदा होने पर भी नहीं सरकता, किसमें हृदय नहीं है और वेग से क्या बढ़ती है?

मत्स्यः सुप्तो न निमिषत्यण्डजातं न चोपति। अश्मनो हृदय नास्ति नदी वेगेन वर्धते॥

मछली सोते हुए आंख नहीं मीचती, अण्डा उत्पन्न होने पर भी नहीं चलता, पत्थर के हृदय नहीं होता और नदी जल के वेग से बढ़ती है।

किं स्वित्प्रवसतोमित्रं किं स्विन्मित्रं गृहे सतः। आतुरस्य च किं मित्रं किं स्विन्मित्रं मरिष्यतः॥

परदेशी का, घर पर रहने वाले का, आतुर का और मरते हुए प्राणी का मित्र कौन है?

सार्थः प्रवसतो मित्रं भार्या मित्रं गृहे सतः। आतुरस्य भिषङ्मित्रं दानं मित्रं मरिष्यतः॥

साथ यात्रा करने वाला परदेशी का, स्त्री घर पर रहने वाले की, वैद्य रोगी का और दान मरते हुए का मित्र है।

कोऽतिथी सर्वभूतानां किं स्विद्धर्मः सनातनः। अमृतं किं स्विद्राजेन्द्रः किं स्वित्सर्वमिदं जगत्॥

सब प्राणियों का अतिथी कौन है, सनातन धर्म क्या है, अमृत क्या है, और यह सब जगत् क्या है?

अतिथिः सर्व भूतानामग्निः सोमो गवामृतम्। सनातनोऽमृतो धर्मो वायुः सर्वमिदं जगत्॥

अग्नि सब प्राणियों का अतिथि है, गौ का दूध अमृत है, अमृत सनातन धर्म है और वायु सर्व जगत् रूप कहलाता है।

किं स्विदात्मा मनुष्यस्य किं स्विदैव कृतः सखा। उपजीवनं किं स्विदस्य किं स्विदस्य परायणम्॥ लाभानामुत्तमं किं स्यात्सुखानां स्यात्किमुत्तमम्॥

मनुष्य का आत्मा कौन है, मनुष्य का दैवकृत मित्र कौन है, मनुष्य का उपजीवन क्या है, मनुष्य का आश्रय क्या है, लाभों में उत्तम लाभ क्या है और सुखों में उत्तम सुख क्या है।

पुत्र आत्मा मनुष्यस्य भार्या दैव कृतः सखा। उपजीवनं च पर्जन्यो दानमस्य परायणम्॥ लाभानां श्रेष्ठ मारोग्यं सुखानां तुष्टिरुत्तमा।

पुत्र मनुष्य का आत्मा कहलाता है, स्त्री मनुष्य का दैवकृत मित्र है, मेघ मनुष्य का

आश्रय स्थान है, लाभों में उत्तम लाभ आरोग्य है और सन्तोष सुखों में उत्तम सुख है।

कश्च धर्मः परो लोके कश्च धर्मः सदाफलः।
किं नियम्य न शोचन्ति कैश्च सन्धिर्न जीर्यते॥

इस लोक में श्रेष्ठ धर्म क्या है, नित्य फल वाला धर्म क्या है, किस को वश में करके शोक नहीं करना पड़ता और किसके साथ की हुई सन्धि नष्ट नहीं होती?

आनृशंस्यं परो धर्मस्त्रयी धर्मः सदा फलः।
मनो यस्य न शोचन्ति सन्धिः सद्भिर्न जीर्यते॥

दया परम धर्म है, तीनों वेदों के अनुसार किया हुआ धर्म नित्य फल देता है, मन को वश में रखने से शोक नहीं करना पड़ता तथा श्रेष्ठ जनों के साथ की हुई सन्धि नष्ट नहीं होती।

क्षमा का च परा प्रोक्ता का च ह्रीः परिकीर्तिता।
तपः किं लक्षणं प्रोक्तं को दमश्च प्रकीर्तितः॥

तप दम, क्षमा और लज्जा के क्या लक्षण हैं?

तपः स्वधर्म वर्तित्वं मनसो दमनं दमः।
क्षमा द्वन्द्व सहिष्णुत्वं ह्रीरकार्य निवर्त्तनम्॥

अपने धर्म में रहने का नाम तपस्या है मन को दबाने का नाम दम है, सुख दुःख सहन करना क्षमा है और कुकर्म से रुकने का नाम लज्जा है।

किं ज्ञानमुच्यते राजन् कः शमश्च प्रकीर्तितः।
दया च का परा प्रोक्ता किंचार्जवमुदाहृतम्॥

ज्ञान, शम, परम दया और आर्जव किसे कहते हैं?

ज्ञानं तत्वार्थ सम्बोधः शमश्चित्त प्रशान्तता।
दया सर्व सुखैप्सित्वमार्जवं समचित्तता॥

तत्व के अर्थ के बोध को ज्ञान कहते हैं, चित्त के परम शान्तपने का नाम शम है, सब को सुख देने की इच्छा रखने का नाम दया है और चित्त को सदा समान रखने को आर्जव कहते हैं।

कीदृशश्च स्मृतः साधुरसाधुः कीदृशः स्मृतः।
किं स्थैर्यमृषिभिः प्रोक्तं किं च धैर्यं मुदाहृतम्॥
स्नानं च किं परं प्रोक्तं दानञ्च किमिहोच्यते।

साधु और असाधु किसे कहते हैं, ऋषियों ने स्थिरता किसे कहा है, धैर्य किसे कहते हैं, परम स्नान किसे कहते हैं और दान किसे कहते हैं?

सर्वभूत हितः साधु रसाधु र्निर्दयः स्मृतः।
स्वधर्म स्थिरता स्थैर्यं धैर्यमिन्द्रिय निग्रहः॥
स्नानं मनो मलत्यागो दानं वै भूतरक्षणम्।

सब प्राणियों के हितैषी को साधु और निर्दयी को असाधु कहते हैं, अपने धर्म से डिगने को स्थैर्य, इन्द्रियों को वश में रखने को धैर्य, मन के मल को दूर करने को स्नान और प्राणियों की रक्षा को दान कहते हैं।

कः पण्डितः पुमान् ज्ञेयो नास्तिकः कश्च उच्यते।
को मूर्खः कश्च कामः स्यात् को मत्सर इति स्मृतः

पण्डित, नास्तिक, मूर्ख, काम और मत्सर किसे कहते हैं?

धर्मज्ञः पण्डितो ज्ञेयो नास्तिको मूर्ख उच्यते।
कामः संसार हेतुश्च तापो मत्सरः स्मृतः॥

धर्म के जानने वालों को पण्डित, मूर्ख को

नस्तिक, जन्म मरण रूप देने वाली वासना को काम और हृदय के सन्ताप को मत्सरता कहते हैं।

धर्मश्चार्थश्च कामश्च परस्पर विरोधिनः।
एषां नित्य विरुद्धानां कथमेकत्र सङ्गमः॥

धर्मार्थकाम यह परस्पर विरोधी हैं इन का एक स्थान पर समागम कैसे होता है?

यदा धर्मश्च भार्या च परस्पर वशानुगौ।
तदा धर्मार्थकामानां त्रयाणामपि सङ्गमः॥

यदि धर्म और स्त्री परस्पर वश में हों तो धर्मार्थकाम इन तीनों का समागम होता है। अब कुछ कोकोक्तियां लिखते हैं।

ये मेरे नयनन बसें येही बसी आकाश।
जहां सहेली ये बसें फैले तहां प्रकाश॥
(तारा)

सुन भाई इक आभरण जगमग उज्वल ज्योति।
तासु नाम को कीट इक निश में करे उद्योत॥
(जुगनू)

काजल की कजलोई ज्यों पेड़न का शृंगार।
हरि डाल पर जाकर बैठी है कोऊ बूझन हार॥
(जामुन)

अपना अपना सब कहै वह काहू को नहिं।
नाच उठै मन मत्त है लखि बादल की छांह॥
(मोर)

श्यामवर्ण इक नागरी अधिक तामसी जान।
काली सम गर्जन करत धावत पवन समान॥
(रेल)

पग विहीन अरु मुख रहित नारी विश्व लखात।
शत शत योजन जाय के कहत हृदय की बात॥
(चिट्ठी)

सुख के लिये बनाया मन्दर,
पवन न जाय उसके अन्दर।
उस मन्दर की रीत दिवानी,
ओढ़े आग बिछावे पानी॥
(दीपक)

काली है कंकाली है, काले बन में रहती है।
लाल पानी पीती है, मर्दों से झोका लेती है॥
(तलवार)

नीलम की पोशाक है शिर पन्ने का ताज।
बैंगुन भूप बजार में बिकते देखे आज॥
(बैंगन)

चीनी में पाले गये बसे मञ्चला देश।
मात पिता तो घर मरे पूत मरे परदेश॥
(मखाने)

छत्तीस व्यञ्जन मध्य से तीन अक्षर चार।
भिन्न भिन्न अक्षर किये पण्डित करो विचार॥
(हड़ताल)

श्याम गौर दो नारी नर,
कभी न रहते मिलकर घर।
नारी आवे नर भग जावे,
नर आते नारी छिप जावे॥
(दिन रात)

एक नारी पर्वत से उतरीं उसके शिर पर पांव।
हे सखी मैं तुम से पूछूं मैं ना जानूं नाम॥
(चक्की)

गगन उड़े ना भय लगै जननी जनै न नारि।

एक अचेम्भा यह सुना कि मांस मनुज को खाय ॥
(पतंग)

लाल केश मुर्गा नहीं सज्जन रंग नहीं मोर ।
बड़ी पूंछ बन्दर नहीं चार पांव नहीं ढोर ॥
(गिरगट)

चक्रपती राजा नहीं दण्ड धरै यम नाम ।
मन चाही सृष्टि रचै विधना ह न कहाय ॥
(कुम्हार)

इक उपजत है खेत में तन मन भरो स्नेह ।
इक सोहे गौर गात शीघ्र बता यह देह ॥
(तिल)

इक नारी करतार बनाई,
ना वह क्वारी ना वह ब्याही ।
लाल रंग सदा ही रहै,
भाभी २ सब जग कहै ॥
(बीरबहुटी)

महात्माओं के वाक्य ।

१. महान् पुरुष जो उपकार करते हैं, उस का बदला नहीं चाहते । भला संसार जल बरसाने वाले बादलों का बदला किस तरह चुका सकता है ?

२. योग्य पुरुष अपने हाथों से मेहनत करके जो धन जमा करते हैं, वह सब दूसरों ही के लिए होता है ।

३. हार्दिक उपकार से बढ़कर न तो कोई चीज़ इस संसार में ही मिल सकती है और न स्वर्ग में ।

४. जिसे उचित अनुचित का विचार है, वही वास्तव में जीवित है पर, जो योग्य अयोग्य का ख्याल नहीं रखता उस की गिनती मुर्दों में की जायगी ।

५. लबालब भरे हुये गांव के तालाब को देखो जो मनुष्य सृष्टि से प्रेम करता है उसकी सम्पत्ति उसी तालाब के समान है ।

६. दिलदार आदमी का वैभव गांव के बीचों बीच उगे हुए और फलों से लदे हुए वृक्ष के समान है ।

७. गरीब को देना ही दान है, और सब तरह का देना उधार देने के समान है ।

८. दान लेना बुरा है चाहे उससे स्वर्ग क्यों न मिलता हो । और दान देने वाले के लिए चाहे स्वर्ग का द्वार ही क्यों न बन्द हो जाय, फिर भी दान देना धर्म है ।

९. हमारे पास नहीं है ऐसा कहे बिना दान देने वाला पुरुष ही केवल कुलीन होता है

१०. याचक के होंठों पर सन्तोष जनित हंसी की रेखा देखे बिना दानी का दिल खुश नहीं होता ।

११. आत्मजयी की विजयों में से सर्व श्रेष्ठ जय है भूख को जय करना । मगर उस विजय से भी बढ़ कर उस मनुष्य की जय है जो भूख को शान्त करता है ।

धैर्य

(श्रीमती सूरज देवी, श्रीभगवद्भक्ति आश्रम)

सुखार्थाः सर्व भूतानां मतःसर्वाः प्रवर्त्तयः।
सुखं च न विना धर्मात् तस्मात् धर्म परो भवेत्॥

"सर्व भूतानां सर्वाः मताः सुखार्थाः प्रवर्तयः" सब प्राणियों के सम्पूर्ण मत सुख के लिए फैले हुए हैं। "च विना धर्मात् सुखं न तस्मात् धर्मपरो भवेत्"। और बिना धर्म से सुख नहीं प्राप्त होता अतः धर्म के परायण होना चाहिए अर्थात् धर्माचरण करने वाला होना चाहिये। मनुजी महाराज ने धर्म के दश लक्षण वर्णन किए हैं।

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौच मिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षम्॥ १

"धृति धर्मस्य प्रथमं लक्षणं"

धृति धर्मका पहिला लक्षण है। "धृति धारण धैर्ययो" अमरकोशे धृतिर्योगान्तरे धैर्य, धारणा ध्यान तुष्टिषु। धृति के पर्याय शब्द धैर्य, धारणा, ध्यान, योग और तुष्टि अर्थात सन्तोष है। धृतिका धर्म प्रायः समस्त धर्मों का मूल है। इसलिए मनु जी महाराज ने धर्मों के दशों लक्षण में प्रथम प्रधान धृति को दिया है। धृतिधर्म के दृढ़ होने पर अन्य धर्मों पर मनुष्य दृढ़ता पालन कर सकता है। कमज़ोर अथवा पोली ज़मीन पर यदि मकान बनाया जाय तो वह नहीं बन सकता यदि बन भी गया तो चिरकाल तक नहीं ठहर सकता है। सुदृढ़ भूमि पर बनाये मकान मज़बूत और अटल हो जाते हैं। इसी प्रकार जब तक मनुष्य की हृदय रूपी भूमि धृतिके गुणों से परिपक्व और दृढ़ नहीं होती मनुष्य तब तक अपने उद्योग को सफल बनाने वाला नहीं हो सकता। जब तक मनुष्य धृतिधर्म को पहिले नहीं धारण कर लेता है तब तक किसी कर्म अथवा धर्म पर आरूढ़ नहीं हो सकता। "प्रारभ्यते न खलु विघ्न भयेन नीचैः"। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जो विघ्नों के भय से किसी शुभ कर्म अथवा धर्माचरण को प्रारम्भ नहीं करते क्योंकि धृति धर्म के गुण से उनका हृदय धैर्य शाली नहीं है। "प्रारभ्यविघ्न विहिता विरमन्ति मध्या"। और जिन के मन धृति के अभाव से अधीर और कम्पित तथा, विचलित हैं वे जन प्रारम्भ किये हुए कार्य को विघ्न आजाने पर बीच ही में छोड़ बैठते हैं। परन्तुः—"विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रति हन्यमानाः, प्रारभ्य चोत्तम जना न परित्यजन्ति" वे जन जिन का कि हृदय धृति के धर्म ने संक्रान्त कर रक्खा है और जिन के मन इतने दृढ़ हो गए हैं कि आपत्तियों के आने पर भी विचलित नहीं होते वह हैं विघ्न पर विघ्न पड़ने पर भी प्रारम्भ किये हुए कार्य को नहीं छोड़ते हैं कहाभी हैः—

चलन्ति गिरयः कामं युगान्तपवनाहताः।
कृच्छ्रेऽपि न चलत्येव धीराणां निश्चलं मनः॥

प्रलय की पवन से ताड़ित पर्वत भी चल विचल हो जाते हैं। परन्तु धीर पुरुषों का निश्चल मन क्लेश पाने पर भी चलायमान नहीं होता है। दुःख आपत्ति और क्रोध के समय में ही धीर पुरुष की धीरता जानी जाती है। तुलसीदास जी ने कहा है।

धीरज धर्म मित्र अरु नारी।
आपत्काल परखिये चारी॥

भर्तृहरि जी ने भी धीर पुरुषों की धीरता को एक श्लोक में वर्णन किया है।

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

नीति शास्त्रके ज्ञाता पुरुष चाहे निन्दा करें अथवा स्तुति करें, लक्ष्मी आवे या यथेष्ट चली जावे, आज ही मृत्यु आजाय अथवा युगान्तर में मरना हो परन्तु धीर पुरुष न्याय के मार्ग से अपना चरण नहीं हटाते हैं। धृतिशाली पुरुष को यद्यपि कष्ट आते हैं परन्तु कष्टों को सहते हुए जो अपने धर्म पर आरूढ़ हैं वे ही वास्तव में धर्मात्मा हैं। कष्टों के धारण करने में ही जीवन है। किसी ने सत्य कहा है। (No resistence- no existence) जहाँ कष्टों को सहन और धारण करने का बल नहीं, वहां जीवन ही नहीं है। जो कष्ट पाते हैं उन्हें ही लाभ है जो कष्ट नहीं सहते वे लाभ से भी वंचित हैं। संसार में मान, इज्जत, बड़ाई, और सुख ये सब कष्ट के पश्चात् ही मनुष्य को प्राप्त होती हैं मनुष्य ही क्या देखिए जो आज हमें एक बहुत विशाल वृक्ष दिखाई देता है यह एक समय बीज के रूप में मिट्टी में मिला और बड़ा होकर उसने सब को अपने ऊपर चढ़ाया। फिर इतने कष्ट पाकर यह बड़ा हुआ तो इतना विशाल वृक्ष हुआ कि सब के शिर पर विराजमान है जिस आदमी ने उसे मिट्टी में रौंदा था वही आज उस के नीचे छाया में विश्राम कर रहा है। दुःखों और कष्टों से ही मनुष्य धैर्यशाली तथा मननशील बनता है धृति। का लक्षण है कि:-

इष्ट वियोगे निष्टप्राप्तौ प्रचलितचित्तस्य यथापूर्वमवस्थानं धृतिः।

इष्ट के वियोग में और अनिष्ट की प्राप्ति होने पर चलायमान चित्त को स्थिर रखना धृति कहलाता है।

एक समय महाराज युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा कि बन्धुवर्ग, धन, सम्पत्ति आदि के नाश होने पर ऐसे भारी दुःख में मनुष्य को कल्याण तथा शान्ति देने वाला क्या है? किस से दुःखी और विचलित हृदय को सान्त्वना प्राप्त होती है। तब पितामह भीष्म जी ने उत्तर दिया-

पुत्रदारैः सुखैश्चैव वियुक्तस्य धनेन वा।
मग्नस्य व्यसने कृच्छ्रे धृतिश्रेयस्करी नृप॥
धैर्येण युक्तं सततं शरीरं न विशीर्य्यति।

हे युधिष्ठिर! पुत्र, स्त्री सुख तथा धन से रहित होनेपर और कठिन आपत्ति आने पर दुःख से व्याकुल हुए मनुष्य को केवल धैर्य ही सुख देने वाला है। धैर्य युक्त पुरुष कभी नाश को नहीं प्राप्त होता है। किन्तु शोक रहित हो सुख शान्ति का अनुभव करता है। दुःखके समय जिन्होंने धैर्य अपनाया है वेही संकटको पारकर सके हैं। संसार में जितने भी धर्मात्मा जन हो चुके हैं अथवा वर्तमान हैं उन सबों ने ही कष्ट पाया है और कष्ट में धीरज धारण किया है। श्रीराम के वन गमन

करने पर सुमन्त का राजा को यह सन्देशा देना कि, श्रीरामचन्द्र जी भ्राता के सहित बन को चले गए तब दशरथ जी के व्याकुल होने पर कौशल्या कहती हैं:-

धीरज धरिये तो पाइये पारू।
नाहित बूड़हि सब परिवारू॥

हे राजन्! धीरज धरोगे तो पार होजाओगे नहीं तो सब परिवार डूब जायगा। धैर्यसे मनुष्य कठिन से कठिन कार्य को कर सकता है इसी धृति धर्मका श्रीभगवान् कृष्णचन्द्र भगवद्गीता में अर्जुन को उपदेश दिया है कि सात्विक राजसिक तामसिक गुणों करके धृति के भी तीन भेद हैं:-

धृत्या यया धारयते मनः प्राणेन्द्रियक्रियाः।
योगेनाऽव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्विकी॥
यया तु धर्म कामार्थान् धृत्याधारयतेऽर्जुन।
प्रसंगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ राजसी॥
यया स्वप्नं भयं क्रोधं विषादं मदमेव च।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी॥

श्रीमद्भगवद्गीता अ० १८

जिस धृति द्वारा मनुष्य मन, प्राण और इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में रखता है वह धृति सात्विकी है। मनुष्य जिस धर्म के द्वारा बाह्यधर्म को, धनादि पदार्थ को और भोगों को धारण करता है तथा प्रसङ्ग मिलने पर फल की आकांक्षा भी करता है वह धीरज राजसी है। जिस धीरजसे दुर्बुद्धि पुरुष निद्रा, भय, शोक, खेद और मद को नहीं छोड़ता वह धीरज तामसी है।

त्याज्यं न धैर्यं विधुरेऽपि काले,
धैर्यात् कदाचित्स्थिति माप्नुयात्सः।
यथा समुद्रेऽपीह पोतभंगे,
सांयात्रिको वाञ्छति तर्तु मेव॥

प्रारब्ध के विपरीत होने पर भी धैर्यका त्याग नहीं करना चाहिये। कदाचित् धैर्य रखने से उसका कोई उपाय ही मिल जाय। जैसे सागर में पोत भङ्ग होने पर कर्णधार धैर्य रख कर समुद्र तरने की इच्छा करता है। अतः प्रारब्ध के विपरीत होनेपर धैर्य का त्याग नहीं करना चाहिए। यह बात पाठकों को इस दृष्टान्त से भली प्रकार समझ में आजायगी।

एक समय एक महात्मा विचरते विचरते एक बाग में आए वहां पर एक माली बैठा हुआ था। उस ने महात्मा की खूब अच्छी तरह से सेवा शुश्रुषा की और पश्चात् भोजन खिला कर आराम करने का स्थान बता दिया। महात्मा सायंकालको जब बागमें से चलने लगे तो उन्होंने विचारा कि इस मालीने हमारी सेवा की है, इस को कुछ उपदेश देकर जाना चाहिए। यह विचार कर महात्मा बोले कि, हेमाली! तुमने हमारी सेवा शुश्रुषा की है, अतः कुछ धर्म का उपदेश हम तुम को बताते हैं इसे सर्वदा याद रखना। माली ने कहा अच्छा महाराज। तब साधु ने कहा कि "धीरज का फल मीठा होता है" यह याद रखना, कल्याण हो जायगा। माली यह सुनकर प्रसन्न हुआ और परीक्षा करने की धुन में हाल की। महात्मा यह कहकर चले गए। माली जब शामको पानी सींचकर घर गया तो स्त्री ने भोजन परोसा

दैवयोग से उस दिन शाक में नमक अधिक हो गया था, माली स्वभावका अति क्रोधी था। अल्प अपराधपर तथा अकारणही क्रोधकरने वाला था। बस जब नमक अधिक होने का कारण मिल गया तो उसके क्रोध का क्या ठिकाना था। जी में आया कि मालन की खबर लूं, परन्तु तत्काल ही महात्मा का उपदेश रूप वाक्य याद आगया "धीरज का फल मीठा होता है" मालीने थालीको उठा कर अलग रख दिया और मुंह फेर कर बैठ गया। मालन चतुर थी समझ गई कुछ शाक में गड़बड़ है। अतः वह एक दूसरे बर्तनमें रोटी और घी शक्कर ले आई और माली के आगे रख दिया माली रोटी खाकर बहुत खुश हुआ और विचारने लगा कि वास्तव में महात्माने यथार्थ ही उपदेश दिया था, यदि मैं लड़ाईकर देता तोहम दोनों को दुःख होता और मैं रात भर भूखा सोता धैर्य से शान्ति भी रही और पेट भर मीठा भोजन भी मिला। माली ने यह वृत्तान्त राजा के सन्मुख भी निवेदन किया। एक दिन राजाकी नगरीमें नाटक वाले नाटक करने आए। रातको नाटक के समय जब राजा चलने लगे तो उनकी षोडष वर्षीया प्रिय पुत्री ने साथ चलने का आग्रह किया परन्तु राजा साथ न लेगए। तदनन्तर जब राजा नाटकशाला जा पहुंचे तो पुत्री ने माता से जाने की आज्ञा मांगी, परन्तु माताने निषेध किया परन्तु अधिक आग्रह देख पुत्री को पुरुष वेष बना भेज दिया। जब नाटक समाप्त होने को हुआ तो राजकुमारी अपने पितासे पहिले आकर अपनी माता के पास आकर सो गई नाटक के समाप्त होने पर राजा आए राजा ने कन्या को न पहचान किसी पुरुष की आशंका कर क्रोध में आ चाहा कि तलवार से धड़ अलग कर दूं। उसी क्षण माली की बात याद आगई "धीरज का फल मीठा होता है" राजा धैर्य धार बैठ गए थोड़ी देर में राज-कन्या ने माता को पुकारा कि मां, मां सर्दी लगती है। तब रानीने जाग करके कहा हे पुत्री! तू कहां आ गई यदि राजा यहां आते तो तुझे देख कर नाराज होते उन की ये बातें सुन राजा अति प्रसन्न हुआ और मन में विचारा कि यदि मैं अब धैर्य न धरता और इन को तलवार से मार देता तो मेरा परिवार ही नष्ट हो जाता, माली ने जो महात्मा से उपदेश सुना और उस ने मुझे सुनाया तो आज मैं स्त्री हत्याके पापसे बच गया वास्तव में "धीरज का फल मीठा होता है" उसने अपनी सारी प्रजा को यह उपदेश सुना दिया। सज्जन पुरुष धैर्य धारण करके ही अनेक कष्टों को सहते हैं। सांसारिक तथा पारमार्थिक सबही कर्तव्यों में धैर्य को हाथ से नहीं छोड़ना चाहिए धैर्य से हिम्मत तथा आत्मबल प्राप्त होता है। यों तो मनुष्य आये दिन कष्टों को सहन ही करते हैं परन्तु जो धीरज को धर्म समझ कर पालन करता है वह धर्मात्मा पुरुष है।

हमारी आयु।

देह धारियों की आयु के सम्बन्ध में दो प्रकार की धारणाएं हैं एक यह कि प्रत्येक देहधारी को भगवान् एक नियत समय के लिए संसार में भेजता है इसमें भी दो भेद किए जाते हैं कुछ लोगों का तो यह मत है कि भगवान अपनी मरज़ी के अनुसार प्रत्येक जीव के लिए समय निर्धारित कर देता है, और उस समय के समाप्त होजाने पर उस जीव को किसी बात का निमित्त रख कर वापिस बुला लेता है। वह निमित्त चाहे

बीमारी हो का या किसी आकस्मिक घटना का, जैसे जल में डूब मरना या अग्नि में जल मरना। दूसरे ऐसा मानते हैं कि भगवान् अपनी मरजी से कुछ नहीं करते वह तो कर्म्मों के अनुसार लोगों को फल देते हैं और आयु भी उनमें से मुख्य बात है। अपने २ कर्मानुसार प्रत्येक जीव को इस संसार में आने के लिए एक नियत समय मिलता है, उसके समाप्त होने पर जीव को यह संसार छोड़कर चला जाना पड़ता है। इससे आगे चल कर अकाल मृत्यु का झगड़ा चलता है कुछ लोगों का कथन है कि नियत समय से पहले भी किसी घटना के कारण मनुष्य का मृत्यु हो जाती है वह अकाल मृत्यु है वास्तव में उसकी मृत्यु का ठीक समय उपस्थित नहीं हुआ होता है। जो लोग केवल परमात्मा को ही, कर्ता मान कर जीव को एक कठपुतली की भान्ति मानते हैं वह तो अकाल मृत्यु के झगड़े से सर्वथा दूर हैं क्योंकि उन के निकट तो प्रत्येक घटना भगवान की प्रेरणा से होती है इस लिए उनके लिए अकाल मृत्यु पर विचार करना नितान्त अनावश्यक है। अकाल मृत्यु का भेद केवल कर्म्म वादियों के लिए है और वास्तविक में कर्मवादियों को ही यह शंका है। इन में से एक मतवाले कहते हैं कि अकाल मृत्यु भी कर्म्म का ही फल है। हमको भूल से यह दिखाई देता है कि अमुक युवक बिना नियत समय के अर्थात अपनी आयु के उपभोग किए बिना ही, अचानक समुद्र में डूब गया या हवाई जहाज़ पर से गिर पड़ा। यथार्थ तो यह है कि जिस आयु में उसकी मृत्यु होती है वही आयु उसके लिए नियत होती है। हमारे अपने भ्रम से मनुष्यों की आयु की अवधि की कल्पना करली है। यह हमारा कल्पित ज्ञान है कि देह धारियों की आयु की कोई अवधि है और यह हमारा ज्ञान हमारे उस अनुभव पर निर्भर है जो विशेषता से हम देखते हैं। मनुष्य का स्वभाव ही ऐसा है कि वह प्रति सैंकड़ा ६० या ७५ घटनाएं देख कर अपने लिए एक नियम निश्चित करलेता है फिर जो घटना उसके माने हुए नियम के विरुद्ध हो उसको वह अपवाद रूप समझता है। यही कारण है कि कर्म्म की शक्ति को मानते हुए और कर्म के नियन्ता परमात्मा की सर्व शक्तिमता को मानते हुए भी वह बिना कारण व काय के व्यर्थ की बातें कल्पित कर लेता है और अकाल मृत्यु की कल्पना भी ऐसे ही विचारों का फल है अन्यथा कर्मवाद में अकाल मृत्यु को स्थान ही नहीं है सत्य तो यह है कि सब घटनाएं कर्म के फलानुसार होती हैं। जब जीव के आयु सम्बन्धी कर्म्म समाप्त होजाते हैं तो उसका शरीर समाप्त होजाता है बाह्य दृष्टि से चाहे वह पांच वर्ष का दिखाई देवे चाहे सौ वर्ष का और चाहे वह ज्वर की व्याधि से मरा हो चाहे जल में डूब कर मरा हो इस बाह्य भेद का कुछ भी ख़याल नहीं करना चाहिए। कर्म्मों के समाप्त हो जाने पर उसका इस लोक से प्रस्थान करना नितान्त आवश्यक है।

अकाल मृत्यु के मानने वाले अपनी इस बात की पुष्टि में क्या दलील उपस्थित करते हैं उसका हमको ज्ञान नहीं है हमने ऐसा दलील करने वालों को शास्त्र का प्रमाण देते तो सुना है परन्तु कभी कोई उचित दलील करते नहीं सुना।

विवेचन

जो आदमी परमात्मा को ही कर्ता मानते

है इनकी बात को छोड़ देना ही ठीक है क्योंकि यह एक वाद विवाद का स्वतंत्र विषय होजाता है। ऐसे आदमियों के लिए हमारा यह कहना है कि यह उच्च कोटि की बात है साधारण मनुष्यों का ऐसी बातें करना हानिकारक व उपहास्य जनक है। जिसने अपने मन और इन्द्रियों को वश में कर लिया है, जो अपने शरीर को मिट्टी के तुल्य समझता है, जो हानि लाभ और सुख व दुःख से ऊपर है और जिसने अपने आप को खोकर परमात्मा के समर्पण कर दिया है, जो समस्त विश्व को परमात्मा की आज्ञानुसार घूमता और कर्म करता हुआ देखता है, ऐसा ज्ञानी पुरुष ही ऐसे विचार प्रगट करने का अधिकारी है अन्यथा अपने आप सब भोग भोगते हुए ऐसी बातें बनाने वाले को उपेक्षा की दृष्टि से देखने के अतिरिक्त कोई उपाय ही नहीं।

अब कर्मवादियों की बात पर विचार कीजिए। जो लोग कर्मों के फलानुसार आयु का होना बतलाते हैं वह दो प्रकार के विचार प्रगट करते हैं कुछ लोगों का कहना है कि कर्मों के अनुसार जीवों के लिए काल की अवधी नियत होजाती है कि अमुक मनुष्य इतने वर्ष इस जगत में रहेगा और कुछ ऐसा कहते हैं कि समय नियत नहीं होता मनुष्य के लिए श्वास नियत होजाते हैं। उन नियत श्वासों को मनुष्य चाहे ५ वर्ष में खर्च कर लेवे और चाहे ५० वर्ष में और इसके लिए वह ऐसे उदाहरण उपस्थित करते हैं कि योगी जन श्वास रोक क्रिया से समाधि चढ़ाकर बहुत काल पर्यन्त शरीर को बनाए रखते हैं। इसके लिए इनका कहना है कि श्वास की गति सूक्ष्म करनी चाहिए जिससे आयु की अवधि वर्षों में बढ़ जावे। परन्तु इस बात को भी जांच की जावे तो यह भी सर्वांश में सत्य प्रतीत नहीं होती कारण फिर तो दौड़ना, कसरत करना और शरीर से परिश्रम करना आदि क्रियाएं आयु को कम करने वाली साबित हुई परन्तु ऐसा नहीं होता है बल्कि ब्रह्मचर्य के लिए और शरीर को स्वस्थ रखने के लिए व्यायाम और शारीरिक श्रम का करना नितान्त आवश्यक है बल्कि देखने में भी यही आता है कि जो शरीर से काम करते हैं और नियमानुसार व्यापार करते हैं वह दीर्घायु होते हैं

इस से हम इस नतीजे पर नहीं आसकते कि दीर्घ श्वास से आयु कम होती है बल्कि दीर्घ श्वास से बड़े २ भयंकर रोग दूर होते देखने में आते हैं परन्तु हम इस सत्य से भी इनकार नहीं कर सकते कि योगी जनों की आयु अधिक होती है और उसका एक कारण उनका अपने श्वासको नियमन करना भी है। अधिक विचार करने से मालूम हो जाता है कि वर्षों की अवधि और श्वासों की संख्या एक ही बात है श्वास के लिए भी काल ही नियत है वह काल के ही अन्तर्गत आ जाता है क्योंकि श्वास काल में ही लिए जायेंगे। इस लिये वर्षों के और श्वासों के स्थूल रूप से दृष्टि ऊपर करके केवल एक काल को ही उस के व्यापक रूप में मान लेना चाहिए। परन्तु इस से हमारा प्रयोजन सिद्ध नहीं हुआ, हम को तो पूर्ण रूप से यह मालूम करना है कि हमारी आयु के घटने की समस्या क्या है?

इसके लिए अब हमको एक ऐसा नियम खोज

निकालने की आवश्यकता है जो कर्म के अन्तर्गत होता हुआ इन सब का कारण रूप हो। यह इस प्रकार समझ में आता है कि चाहे जीव के कर्मानुसार, चाहे आत्मा के विकास के क्रम के अनुसार देह धारण करने के लिए हमको प्रकृति की एक शक्ति मिलती है उस शक्ति के आधार पर पांच भूतों का संमिश्रण होता है और उस संमिश्रण से देह बनता है। उस संमिश्रण का जितना उत्तम से उत्तम और निकृष्ट से निकृष्ट विधान होता है उतना ही हमारा शरीर भी उत्तम व निकृष्ट होता है। यह बात मालूम होने पर वर्ष और श्वासों की बात न रह कर यह बात रही कि जैसी उत्तम या निकृष्ट शक्ति से यह शरीर बनता है वह इस की पूंजी है। अब इस पूंजी का प्रयोग करना इस जीवके अर्थात हमारे अपने ही आधीन है। हम इस पूंजी को बढ़ा भी सकते हैं और घटा भी सकते हैं। जिस तरह सावधानी से काम करने से हम सो के डेढ़सो कर लेते हैं और असावधानी से वर्ताव करने पर सो के ५० रह जाते हैं इसी तरह हम अपनी आयु को घटा भी सकते हैं और बढ़ा भी सकते हैं। इससे कर्मवाद के सिद्धान्त में कुछ भी अन्तर नहीं पड़ता है।। भूत काल में किया हुआ कर्म प्रारब्ध है और वर्तमान में किया हुआ कर्म पुरुषार्थ है। प्रारब्ध और पुरुषार्थ दोनों के करने वाले हम ही हैं. यह कर्म हमारे स्वामी नहीं हैं, मालिक तो हम ही हैं परन्तु क्या यह हमारे आधीन है ! उस का उत्तर यह है कि इनका असली रूप सहायक का है। यह हमारे सहायक और बाधक दोनों हैं और सहायक भी एक प्रकार से आधीन होता है यद्यपि वह शक्तिशाली होता है। प्रारब्ध कर्म से घबराना नहीं चाहिए कर्म जड़ पदार्थ है हम चैतन्य हैं। हम प्रारब्ध को अपना सहायक बना सकते हैं और जहां वह हमारा बाधक हो वहां पुरुषार्थ के द्वारा इसकी शक्ति को कुंठित कर सकते हैं।

हां आयु को घटाने और बढ़ाने के लिए हम ही कर्तव्यकरने वाले हैं। हमको यह बात दिल से निकाल देनी चाहिए कि हम अपनी आयु नहीं बढ़ा सकते। आयु को बढ़ाने के लिए यह बात समझ में आती है कि प्रकृति का जो अंश हमारे शरीर में कमजोर हैं वह अंश किसी न किसी साधन से बलिष्ट बनाया जावे। इस जगत में हमारे चारों तरफ भूतों का पसारा है इन का संग्रह करना हमारी अपनी योग्यता और पुरुषार्थ पर निर्भर है। आयु के बढ़ाने के अनेक साधन हैं और इसी प्रकार बहुत सी ऐसी असावधानियां और भूल हैं जिन से हम अपनी आयु कम कर लेते हैं। किसी रोग को दूर करने के लिये भी यही प्रयोग किया जाता है। जब से हम ने प्रारब्ध को पुरुषार्थ से बड़ा माना है तब ही से ऐसे साधारण कामों को भी हम ने बहुत बड़ा और असम्भव समझकर उस के लिए पुरुषार्थ करना छोड़ दिया है। अपने आप को कर्म जैसे जड़ पदार्थ के आधीन समझ कर सब प्रकार का पुरुषार्थ करना छोड़ दिया जिस का फल यह है कि हम सब प्रकार हीन होते जा रहे हैं। अमेरीका में ऐसी २ समाजें बनी हुई हैं जो आयु को बढ़ाने के अनेक साधनों का प्रयोग कर इस ज्ञान को समाज में फैलाती हैं। उनके प्रयत्न से लोगों की आयु में वृद्धि हुई है। और आगे के लिए उन के बहुत सफलता की

आशा है। ऐसी २ समाजें हैं जिनमें सौ वर्ष को आयु से कम को एक भी मनुष्य नहीं है। प्राचीन समय में हमारे देश में इस ज्ञान का बड़ा प्रचार था। बड़ी २ लम्बी आयु के मनुष्य होते थे जिन से समाज का बड़ा हित साधन होता था। कम से कम सौ वर्ष की आयु के लिए तो हम नित्य प्रति प्रार्थना किया करते थे। लोगों की आयु कम होती जा रही है इस लिए आयु सम्बन्धी विज्ञान का प्रचार होना चाहिए और उस के लिए ऐसे साधन बनाए जाने चाहिएं जिन से लोग लाभ उठा सकें। ज्ञान के साथ उसका प्रयोग भी होना चाहिए बिना प्रयोग के फल नहीं मिलता। इस के साधनों के सम्बन्ध में फिर लिखेंगे।

भजन १

मेरी नैय्या को पार लगादो प्रभो ॥ टेक ॥
गहरे नीर भंवर में अटकी,
  चारों तरफ सुरती भटकी।
मंज़िल कठिन है परले तट की,
  मेरी डूबत को ओर बन्धादो प्रभो ॥१॥
छीले पात ने चिड़ी दबाई,
  ढूंढत आहलग अति घबराई।
ऐसी अविद्या हम पर छाई,
  यह तो डोर से नैय्या छुड़ादो प्रभो ॥२॥
काम क्रोधमद शोक न घेरा,
  कुछ नहीं बस चलता है मेरा।
अब तो सहारा लेलिया तेरा,
  मैनु मुक्ति का द्वार बतादो प्रभो ॥ ३ ॥
घट घट में प्रकाशमान हो,
  तुम बिन हम को नहीं ज्ञान हो।
कबीर तर निस धरत ध्यान हो,
  मेरा आवागमन मिटा दो प्रभो ॥ ४ ॥

हो रसिया मैं तो शरण तिहारी ॥ टेक ॥
  नहि साधन बल बन चातुरी।
एक भरोसा चरणे गिरिधारी ॥ १ ॥
  कडुइ तुंबरिया मैं तो नीच भूमि की।
गुण-सागर पिया तुम हो सुधारी ॥ २ ॥
  मैं अति दीन बालक तुम शरन।
नाथ न दीजे अनाथ बिसारी ॥ ३ ॥
  निज जन जानि संभालोगे प्रीतम।
प्रेमसखी नित जाऊं बलिहारी ॥ ४ ॥

दीनन दुख-हरन देव सन्तन हितकारी ॥ ध्रु० ॥
अजामील गीध व्याध, इनमें कहो कौन साध।
पंछी को पद पढ़ात, गणिका सी तारी ॥ १ ॥
ध्रुव के सिर छत्र देत, प्रहलाद को उबार लेत।
भक्त हेत बांध्यो सेत, लङ्क-पुरी जारी ॥ २ ॥
तंदुल देत रीझ जात, साग-पात सों अघात।
गिनत नहीं झूठे फल, खाटे मीठे खारी ॥ ३ ॥
गज को जब ग्राह ग्रस्यो, दुःशासन चीर खस्यो।
सभा बीच कृष्ण कृष्ण, द्रौपदी पुकारी ॥ ४ ॥
इतने हरि आय गये, बसनन आरूढ भये।
सूरदास द्वारे ठाढ़ो अंधारो भिखारी ॥ ५ ॥

भजन की धुनी

१. गौरी शंकर सीता राम राधे श्याम श्यामा श्याम।
२. रघुपति राघव राजा राम,
पतित उधारन सीताराम।
३. जय रघुनन्द जय सिया राम,
जानकी वल्लभ सीताराम।
४. जय नारायण जय गोविन्द हरे,
जय नारायण जय गोपाल हरे।
५. हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे,
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।

भक्ति के नियम।

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना गो रक्षण और उस के लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना। वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना। सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना। राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. वार्षिक चन्दा सर्वसाधारण से २) होगा।

४. जो महानुभाव २५) रुपया देंगे वह पत्र के संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे।

५. अश्लील और अपरिचित विज्ञापन नहीं लिए जावेंगे।

६. लेखों को प्रकाशित करना और और घटाना व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नाम से और विज्ञापन व प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए।

विषय सूची।

नं०	विषय	पृष्ठ
१.	मंगलाचरण	४१
२.	भक्तों के चरित्र [सम्पादक]	४४
३.	काश्मीर यात्रा [भूमानन्द ब्रह्मचारी]	३८
४.	मित्र, मित्र के लाभ और लक्षण	५४
५.	ओंकार महिमा	५६
६.	पूर्व काल में कहानियों द्वारा विज्ञान की शिक्षा	६०
७.	महात्माओं के वाक्य	६४
८.	धैर्य [श्रीमती सूरज देवी श्रीभगवद्भक्ति आश्रम]	६५
९.	हमारी आयु [सम्पादक]	६८
१०.	भजन	७२

बिना गुरु के सिद्धान्त कौमुदी ।

भाषाफक्किका प्रकाश ॥

इस पुस्तक में बहुत ही सरल भाषा में तथा प्रश्नोत्तर के रूप में सिद्धान्त कौमुदी की गूढ़ फक्किकाओं को समझाया गया है। विद्यार्थियों के बड़े लाभ की पुस्तक है इस से विद्यार्थी लघु पढ़ कर स्वयं सिद्धान्त कौमुदी पढ़ सकते हैं। मूल्य केवल ॥)

ज्ञानधर्मोपदेश ।

इस छोटी सी पुस्तक में वेद शास्त्र तथा धर्म का सार संगृहीत है और वेदान्त की उत्तम कविताओं का संग्रह है। मूल्य -)॥।

वेदोपनिषत् ।

इस पुस्तक में ईश, कठ, केन, मुण्डक, और माण्डूक्यादि उपनिषदों तथा वेदों के उत्तम २ मन्त्रों का अर्थ सहित संग्रह है। मूल्य ।-)

अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला ।

इस पुस्तक में गीता और उपनिषदों से १०८ बहुत ही उत्तम श्लोकों का संग्रह है। यह नित्य पाठ करने की पुस्तक है। मूल्य -)।

भगवद्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहिता ।

इस पुस्तक में प्रथम मूल है तत्पश्चात् अन्वय तथा सरल संस्कृत में प्रत्येक मूल के पर्याय हैं फिर सरल हिन्दी भाषानुवाद है। यह गीता के जिज्ञासु तथा कथकक्कड़ों के बहुत ही लाभ की पुस्तक है पृष्ठ संख्या ४२६ होने पर भी हमने भक्त जनों के हितार्थ मूल्य केवल ।।=) ही रक्खा है शीघ्रता कीजिये केवल १००० ही प्रतियाँ हैं जिन के अति शीघ्र ही निकल जाने की आशा है.

सत्य शब्द संग्रह ।

इस पुस्तक में महात्माओं की उत्तम २ वाणियों का संग्रह है। वेदान्त विषय की उत्तम कोटि की कवितायें कवित्त तथा सवैये हैं। अन्त में विचार सागर है। यह भक्त जनों के नित्य पाठ की बड़ी ही उत्तम पुस्तक है मूल्य ।=)

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" आश्रम रामपुरा रेवाड़ी ।